CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वैदिकधर्म

मार्च १९६२

*

५० नये पैसे

श्री सुभाषचन्द्र

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वर्ष ४३ **वैदिक धर्म** अंक ३

क्रमांक १५९ : मार्च १९६२

संपादक

पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

विषयानुक्रमणिका

१ हमारी इच्छा पूर्ण कर (वैदिक प्रार्थना) १०८

२ स्वाध्याय-मण्डल वृत्त ११०

३ यीशुकी वाल्यावस्था और भारतयात्रा
श्री विश्वमित्र वर्मा १११

४ वैदिक सन्देश और विश्वशान्ति
श्री डॉ. विश्वमित्र ११७

५ मनु श्री ना. गो. चापेकर १२१

६ अपनी मातृभूमिको ही अपनी श्रद्धाका केन्द्र बनाओ श्री गुरुजी १२५

७ भारत और अरबके सम्बन्ध
श्री. डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी १२८

८ वैदिक देवता विज्ञान श्री उद्धव १३३

९ वेदोंके अध्ययन करनेकी पद्धति
श्री श्री. दा. सातवलेकर १३३

"वैदिक धर्म"

वार्षिक मूल्य म. आ. से ५) रु.

वी. पी. से रु. ५.६२, विदेशके लिये रु. ६.५०

संस्कृत-पाठ-माला

(चौबीस भाग)

[संस्कृत-भाषाके अध्ययन करनेका सुगम उपाय]

इस पद्धतिकी विशेषता यह है—

भाग १–३ इनमें संस्कृतके साथ साधारण परिचय करा दिया गया है।

भाग ४ इसमें संधिविचार बताया है।

भाग ५-६ इनमें संस्कृतके साथ विशेष परिचय कराया है।

भाग ७–१० इनमें पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंगी नामोंके रूप बनानेकी विधि बताई है।

भाग ११ इसमें "सर्वनाम" के रूप बताये हैं।

भाग १२ इसमें समासोंका विचार किया है।

भाग १३–१८ इनमें क्रियापद–विचारकी पाठविधि बताई है।

भाग १९–२४ इनमें वेदके साथ परिचय कराया है।

प्रत्येक पुस्तकका मूल्य ।।) और डा. व्य. =)

२४ पुस्तकोंका मूल्य १२) और डा. व्य. १।)

मन्त्री— स्वाध्याय-मण्डल,

पो. 'स्वाध्याय-मण्डल (पारडी)' पारडी [जि. सूरत]

यजुर्वेदका सुबोध भाष्य

अध्याय १ श्रेष्ठतम कर्मका आदेश १॥) रु.

,, ३२ एक ईश्वरकी उपासना अर्थात् पुरुषमेध १॥) ,,

,, ३६ सच्ची शांतिका सच्चा उपाय १॥) ,,

,, ४० आत्मज्ञान – ईशोपनिषद् २) ,,

डाक व्यय अलग रहेगा।

मंत्री— स्वाध्याय-मण्डल,

पो.–'स्वाध्याय-मण्डल (पारडी)' पारडी [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वैदिकधर्म

हमारी इच्छा पूर्ण कर

३·२ १ २ ३
शग्ध्यूषु शचीपत
२ ३ १ २ ३ १ २
इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
२ ३ · १ २र ३ १ २ ३ २३
भगं न हि त्वा यशसं वसुविद्--
१ २ ३ १ २
मनु शूर चरामसि ॥ १ ॥

(सामवेद २५३; ऋ. ८।६१।५)

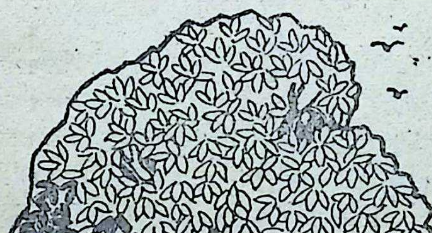

हे (शची-पते) हे शक्तियोंके पालक, (इन्द्र) परमेश्वर ! हे देवोंके देव ! (विश्वाभिः ऊतिभिः) सब प्रकारके संरक्षणोंके साधन तुम्हारे पास हैं, इसलिये (उ सुशग्धि) तू हमारी इष्ट कामना पूर्ण कर । हे (शूर) वीर इन्द्र ! (वसु-विदं) धनोंसे युक्त (यशसं) यशस्वी (भगं न) ऐश्वर्यवान्के समान (त्वा) तेरे (हि) ही (अनुचरामसि) अनुकूल होकर हम अपना व्यवहार करते हैं ।

परमेश्वरके नियमोंके अनुकूल अपना व्यवहार सब साधक करें, जिससे प्रसन्न होकर वह मानवोंकी शुभ कामनाएं उत्तम रीतिसे पूर्ण करेगा ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

★

वेदमुद्रण निधि— इस मासमें वेदमुद्रण निधिमें आगे दी हुई रकमें जमा हुई है—

श्री. रामचन्द्र कृष्णराव भोंसले, दादर	१००१
,, काशीराम शर्मा वैद्य, जडचर्ला	८
,, शंकरलाल सिताराम राठी, सोलापूर	६
,, एक सद्‌गृहस्थ, पारडी	३

आशीर्वाद टीकीट

श्री. पां. म. ओक,	अमळनेर	५
,, स. गो. खाडिलकर	,,	५
,, मोडक बंधु,	नाशिक	५
,, रघुनाथ गणेश मेहेंदळे	,,	५
,, वसंत प्रभाकर गुप्ते	,,	५
,, गजानन जनार्दन म्हात्रे	,,	५
,, डॉ. सि. ना. गांडगीळ	,,	५
,, दत्तात्रय बाळकृष्ण टकले	,,	१
,, दत्तात्रय विनायक देवळालकर	,,	१
,, रघुनाथ कृष्ण गाडगीळ	,,	१
,, पं. चा. भाळे,	अमळनेर	१
,, मा. स. कुलकर्णी	,,	१
,, पी. टी. भावसार	,,	१
,, वा. स. कवीश्वर	,,	१
,, गो. रा. बुवा	,,	१
श्री. मेसर्स ढोमण बुधा	,,	१
,, बी. जे. गुजराथी	,,	१
,, हरी पंढरिनाथ बहिरट, पंढरपूर		१
,, डी. बी. परांजपे	नाशिक	१
,, दि. प्र. देशमुख	,,	१
,, बा. दा. शिरवाडकर	,,	२
,, चं. मो. शेवाळे	,,	१
,, अं. गो. पुणतांबेकर	,,	१
,, बी. आर. त्रिवेदी	,,	१
,, द. के. खरपंडीकर	,,	१
सौ. इंदुमती खाडिलकर	,,	१
श्री. रमेश इंगळे	,,	१
,, व. रा. दवे	,,	१
,, व. दा. साठे	,,	१
,, मनोहर बेडेकर	,,	१
,, प्र. आर. जोशी	,,	१
	योग रु.	१,०७८
	पूर्व प्रकाशित रु.	१,१८,२६७.८८
	कुल योग जमा रु.	१,१९,३४५.८८

इस मास 'ब्रह्मविद्या' प्रकरण हिंदीमें छपना शुरू हुआ है अन्य पुस्तकें पूर्व प्रकाशित हुई छप रही है।

मंत्री— स्वाध्याय-मंडल, पारडी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यीशुकी बाल्यावस्था और भारत यात्रा

लेखक— श्री विश्वामित्र शर्मा, विषहर जंगल, डभौरा (रींवा) (म. प्र.)

भूमिका

ईसाइयोंके धर्मग्रन्थ बाइबिलमें जिन पत्रोंका पुस्तक रूपमें संग्रह है वह संग्रह यीशुकी मृत्युके कईं सौ वर्षों बाद किया गया था। यीशु मसीहको शूली पर चढाने तक उनके उपदेशोंने धर्मका रूप नहीं लिया था। उनके बारह शिष्योंमें सब सर्वदा एक साथ एकत्रित न रहे वरन् अलग अलग दूर थे और समय समय पर आवश्यकतासे एकत्र होते थे, उनके साथ घटनाओंका अलग अलग उल्लेख किया है जिनमें उनके जन्मसे मृत्यु तकका सारा सच्चा वृत्तान्त सम्मिलित नहीं है। यीशुका जन्म कब हुआ अभी अनिश्चित है, और ईसवी सन् उसके पश्चात् आरंभ किया गया। बाइबिलके लेख भिन्न भिन्न व्यक्तियों द्वारा कब लिखे गये, पता नहीं परन्तु यह संग्रह कईं सौ वर्ष बाद उनके वंशजोंसे मिला, उनमें यीशुके जन्म बाल्यावस्था तथा भारतयात्राका निश्चित और सम्पूर्ण वर्णन नहीं है।

प्रस्तुत लेखमें उनके बाल्यजीवन, शिक्षा एवं भारतयात्रा सम्बन्धी जो वृतान्त है वह बाइबिलसे सम्बद्ध नहीं, उसके लेखकोंको इस वृत्तान्तका ज्ञान नहीं था, अन्यथा वे अवश्य लिखते। यीशु भारतमें बारह वर्षकी अवस्थामें आये और बारह वर्ष तक पर्यटन, शिक्षा, संस्कार एवं सत्संग करके चौबीस वर्षकी अवस्थामें काश्मीर जाकर लौटे। अभी बारहके अतिरिक्त तेरहवें शिष्य सन्त टामसकी पुस्तक मिली है जिसे पढने समझनेके बाद बाइबिलमें सम्मिलित किया जायगा।

जिस प्रकार पानीमें कंकड फेंकनेसे लहरें उठकर बराबर गोलाकार होकर पानीकी सीमाके अन्ततक अर्थात् किनारे तक मिट जाती हैं, और घंटानाद करनेसे वायुमें लहरें उत्पन्न होकर कुछ दूर तक सुनायी पडती हैं, परन्तु वे लहरें मौन होकर भी सूक्ष्म स्पन्दन द्वारा न सुनाईं देने पर भी सूक्ष्माकाशके तत्वोंको प्रतिस्पन्दित करती अखिल विश्वमें व्याप्त होकर दूसरे लोकों, तारों तक अनन्त असीम आकाशमें सदा फैलती रहती है। शब्द बोल देनेपर उसका कभी अन्त नहीं होता वह मिटता नहीं। जिस प्रकार पृथ्वी पर किसी भी स्थानसे बोला हुआ शब्द रेडियो द्वारा उसी क्षण कहीं भी दूसरे स्थानमें सुना जाता है, आठ मिनटमें सूर्य तक और २७ मिनटमें वृहस्पति तक, इसी प्रकार अन्य लोकों ग्रहोंमें जल्दी या देरसे पहुंचता है। प्रकाशकी गतिके समान शब्दकी भी सूक्ष्माकाशमें गति है, और यह चक्र अनन्त और असीम होता है।

यह आकाश अनन्त और असीम है, इसमें सब कुछ समाया हुआ भूत, वर्तमान और भविष्य है। हमारे विचारों, शब्दों मरनेवालोंके रूप रंग आकारोंसे भरा हुआ और प्रतिक्षण भरता रहता है और भरता रहेगा। कबसे यह क्रम आरंभ हुआ, कबतक यह क्रम चलता रहेगा, इसकी कोई माप नहीं, कोई कल्पना नहीं। रेडियोकी भांति यदि कोई सूक्ष्म ट्यूब और बाल्ब बने तो हजारों वर्ष भूतकालका इतिहास, विचार दृश्य सब कुछ खुले चित्रोंके सदृश दिखायी देगा। अनन्त असीम चेतनाकाशमें संसारके लोगोंके विचार, शब्द, घटनाएं अमर और अविनाशी बने रहते हैं। भूतकाल है ही नहीं, सब कुछ वर्तमान है, भविष्य भी नहीं है। हमारी इन्द्रिय और ज्ञान सीमित है, इसीलिए हम भूत भविष्यकी कल्पना करते हैं। जैसे टेलीविजन देखा जाता है, सब इतिहास सिनेमाकी भांति साक्षात् देखा सुना जा सकता है, भले ही भाषाओंकी भिन्नतासे देशकालके भेदसे वह समझमें न आवे। निम्न वर्णन गंभीर मनोयोगी लेवीने चेतन विश्वाकाशसे साम्य स्थापित करके बाइबिलमें अलिखित गाथाओं को, अलिखित सूक्ष्माकाशके इतिहाससे प्रकट किया है।

+ + +

यीशुका स्वप्न

जोसफका घर नाजरथमें मरमियनकी गलीमें था, यहीं यीशुकी माता मरियम उनको शिक्षा देती थी। यीशुको वेदोंकी ऋचाएं, अवस्ता, डेविडके गीत, और सोलोमनके उपदेश बहुत प्रिय लगते थे। उस समय, लगभग दो हजार वर्ष पहले आज जैसे अनेक धर्म सम्प्रदाय न थे, उनमें भेद संकीर्णता न थी, लोग धर्म, शिक्षा, सत्संग, व्यापारके लिए मिश्रदेश तककी यात्राएं करते थे, मिश्र उस समय

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुप्त विद्वानोंका विख्यात केन्द्र था, और वहांसे शिक्षित दीक्षित होकर लौटने पर भारतमें 'मिश्र' कहे जाते थे, संभवतः इसी कारण उनके वंशज आज भी, अज्ञानी निरक्षर होकर भी मिश्र कहे जाते हैं।

यीशुको यहूदियोंकी ग्रन्थोंमें लिखित भविष्यवाणी पढने में बडा आनन्द आता था। यीशु जब सात वर्षके हुए तब कुछ पुस्तकोंका ज्ञान उन्हें कण्ठस्थ हो गया था, और उन्होंने पुस्तकें पढना छोड दिया था।

वर्ष गांठके उपलक्षमें यीशुके दादा-दादी जोआचिम और उसकी पत्नीने यीशुके समवयस्क बालकोंको एक बडा भोज दिया। भोजनके उपरान्त यीशुने उपस्थित अतिथियोंको सम्बोधित करते हुए अपने भाषणमें एक स्वप्नका वृत्तान्त सुनाया। उन्होंने कहा—

'मैं स्वप्नमें एक समुद्र किनारे रेत पर खडा हुआ था। समुद्रमें बडी लहरें उठ रहीं थीं, इतनेमें मुझे किसीने एक जादूकी लकडी दी, उस लकडीको रेतमें छूते हुए भूमिपर चलाया तो उस रेतराशिका प्रत्येक कण सजीव और चैतन्य हो गया, उसमें सौन्दर्य, दृष्टिगोचर हुआ, मुझे उनका मधुर संगीत सुनायी देने लगा। फिर मैंने वह मायावी यष्टिका समुद्र जलमें फिरायी तो बडे पौधे उत्पन्न होकर पुष्पित फलित हुए और चिडियां उत्पन्न होकर, वे सब परमात्माका सौन्दर्य सृष्टिमें बिखेरने लगे परमात्माका दिव्य स्तुति गान करने लगे। मुझसे किसीने कुछ कहा, परन्तु उसे मैं न देख सका। उसने कहा— इस सृष्टिमें मृत्यु नहीं है, कुछ भी नाशवान् नहीं है, सब अमर और अविनाशी हैं, किसीका जन्म भी नहीं है, विश्वमें कुछ भी नया नहीं है।'

पौत्रकी बातें सुनकर उनकी दादी अन्ना उनके सिर पर हाथ फेरने और प्यार करने लगी और कहा— हां, मैं तुम्हारे स्वप्नका अर्थ समझ गयी। इस जीवन रूपी सागरमें भयंकर ज्वार भाटा आया करता है, इसके भयसे बहुतसे लोग निरुत्साह निराश और निष्क्रिय होकर मुर्देके समान बैठे रहते हैं, जैसे समुद्र किनारेकी रेत। तुम्हारी जादूकी लकडीका अर्थ है सत्यका उपदेश, सत्यका ज्ञान। इसका प्रचार प्रसार इन निष्क्रिय लोगोंमें करके तुम हर एक निराश व्यक्तिकी आत्मामें प्रकाश जगमगा सकते हो, जीवनके कर्म मार्गमें आरूढ कर सकते हो, इससे उनके जीवनका ज्वार भाटा शान्त हो जायगा, और उनके श्वास प्रश्वाससे स्तुति और सौन्दर्य गान प्रकाशित होगा। सचमुच इस सृष्टिमें मृत्यु और विनाश नहीं है, क्योंकि सत्यके ज्ञानसे मुर्दा बनी हड्डी भी चेतन हो जाती है, वह प्रकाशित होकर फूलती फलती है, कटु रुदन मधुर संगीत बन जाता है। विचार ही मृत्यु है, विचार ही अनन्त जीवन है।

उनके दादा जोआचिमने कहा बेटा तुम आज सात वर्षके हो गये। तुम जो चाहो, आज मांगो जिससे तुम्हारा दिल प्रसन्न हो।

यीशुने कहा— मैं प्रसन्न हूं, मुझे कुछ नहीं चाहिए मेरे समवयस्क सहपाठी प्रसन्न हों, यही मेरी सबसे बडी प्रसन्नता है। और मुझे क्या चाहिए? इस गांवमें बहुतसे ऐसे बालक हैं जो आज हमारे साथ भोजन करें तो बडा आनन्द होगा और मुझे भी बडी खुशी होगी। यदि आप आज्ञा दें तो मैं ऐसे भूखे बालकोंको नगरसे एकत्रित कर ले आऊं जिससे वे भी हमारे भोजमें सम्मिलित हों।

जोआचिम सहमत हुए, बोले, जाओ सबको लिवा लाओ, सबके लिए भोजन बनेगा। यीशु अविलम्ब गये और सबकी झोपडियोंमें भोजका सन्देश सुना दिया। थोडी ही देरमें मरमियनकी गलीमें एक सौ साठ गरीब फटे चीथडे पहने हुये लडके लडकियां हंसते हुए एकत्रित हो गये। वृहत् अतिथि शालामें इन सबोंने स्थान ग्रहण किया। यीशु और उनकी मां भोजन परोसने लगे। इस प्रकार यीशुकी सातवीं वर्ष गांठका उत्सव खुशी-खुशी सम्पन्न हुआ।

आचार्यको उत्तर

आचार्य बराचिया नाजरथमें यहूदी मण्डलीका एक अध्यापक था, और यीशुको क्या शिक्षा देना चाहिये, इस विषयमें मरियमको निर्देश दिया करता था। एक दिन इस अध्यापकने यीशुसे पूछा—धर्मशास्त्रमें सबसे बडी बात कौनसी है?

यीशु बोले—मुझे धर्मशास्त्रमें कोई एक बात बडी नहीं मालूम होती, सब उपदेश एक प्रेम सूत्रमें गुंथे हुए हैं, अतएव यही मुख्य है और सबमें व्याप्त है, जिसके दिलमें प्रेम भरा हुआ है वही परमात्माकी पूर्ण आराधना कर सकता है क्योंकि परमात्मा प्रेमरूप है प्रेम भरे दिलवाला व्यक्ति हिंसा नहीं करेगा, झूठ नहीं बोलेगा, लोभ नहीं करेगा, कोई अपकृत्य नहीं करेगा। जिसके दिलमें प्रेम है उसे किसी धर्म सिद्धान्त या शास्त्रोपदेशकी आवश्यकता नहीं।

अध्यापक इतना सुनकर बोले—तुम तो दिव्य ज्ञानकी बातें करते हो। किस गुरुने तुम्हें ये बातें बतायीं?

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यीशु बोले-मैं किसी गुरुको नहीं जानता, सत्य तो सनातन है, सर्वव्यापक है, सबको प्राप्य है। दिव्य ज्ञान कहीं बन्द और गुप्त नहीं हैं। हम अपने मनकी संकीर्णता छोड़ दें, और हृदयको खोल दें, तो दिव्य ज्ञान हममें भर जायगा।

अध्यापकने पूछा-मन और हृदय कैसे खोलें?

यीशुने उत्तर दिया-केवल अभेद प्रेमसे; यही एक उपाय है, इसके द्वारा मनुष्य सब कुछ जान सकता है।

जब सन्ध्या समय यीशु अपनी मांके पास बैठे थे तो मांसे बोले-यहूदी अध्यापक समझते हैं कि परमात्मा पक्षपाती है, और संसारके अन्य लोगोंकी अपेक्षा यहूदियोंको अधिक प्रेम करता है। मेरी समझमें नहीं आता कि न्यायकारी परमात्मा पक्षपात कैसे कर सकता है। सब लोग ईश्वरके पुत्र होकर ईश्वरकी दृष्टिमें एक समान हैं। यहूदियोंने संकीर्ण विचारधारासे अपने चारों ओर एक सीमा खड़ी कर ली है। हमें इस संकीर्णताकी सीमाको तोड़ना होगा। मैं यहूदी प्रान्तसे बाहर अन्य देशोंमें जाकर अपने विश्व बान्धवोंसे मिलूंगा।

मन्दिरमें हत्याएं

कालान्तरसे यीशु दश वर्षके हुए। पुनः बृहत् भोजका आयोजन समाप्त होने पर यीशु अपने माता पिता, मरियम और जोसफके साथ जेरुसलम गये। यीशुने देखा कि वहां लोग ईश्वरको भेंट चढ़ानेके लिए भेड़ बकरों और चिड़ियों पक्षियोंको मार कर आगमें भून रहे थे। यह सब क्रूरता देखकर यीशुका कोमल हृदय दहल गया। उन्होंने वहांके पुजारियोंसे पूछा कि इस हत्याकाण्डका क्या प्रयोजन है? तुम भगवान्के सामने पशु पक्षियोंको मारकर क्यों भून रहे हो?

एक पुजारीने उत्तर दिया-ईश्वरने हमें आज्ञा दी है। ऐसा करनेसे हमारे पाप नष्ट होंगे, हम अपने पापोंका प्रायश्चित्त कर रहे हैं।

यीशुने पूछा-कृपया बताइये, ईश्वर कहां है, कब और कहां ऐसे हत्याकाण्ड द्वारा पाप मोचनकी आज्ञा दी है, क्या डेविडने नहीं कहा कि ईश्वर कोई बलिदान नहीं चाहता, वह कोई मरी, भूनी गयी वस्तु भेंट नहीं चाहता।

तब पुजारीने कहा-बेटा, तुम यह सब अपनी बुद्धिसे कह रहे हो। यह बच्चोंको अपनी अकल प्रदर्शित करनेकी जगह नहीं है।

यीशुने पुजारीकी बातें सुनकर मुख्याध्यक्ष हिल्लाकके पास गये और बोले-मैं तुमसे कुछ बात करने आया हूं। यहांके अमानुषिक कृत्य देखकर मेरा हृदय दुःखी है। मैं तो समझता था कि ईश्वरका मन्दिर एक ऐसा स्थान होगा जहां प्रेम और दयाका निवास हो। क्या तुम इन भेड़ों, बकरों और पक्षियोंके दुःखी चीत्कार नहीं सुनते, वे रक्षाके लिए त्राहि त्राहि पुकार रहे हैं? क्या तुम्हें इनके भुनते हुए चर्म मांसकी दुर्गन्धि नहीं मालूम होती? मनुष्य क्रूर होकर कैसे न्यायी और कृपालु परमात्माका भक्त और पूजक हो सकता है? जो ईश्वर अपने पुत्रों, प्राणियोंके रक्तपात, बलिदानसे उनके भुने मांससे प्रसन्न होता है वह परमपिता परमात्मा नहीं हो सकता। मैं प्रेम रूप परमात्माको खोजता हूँ। तुम हमारे मुख्याध्यक्ष हो, मण्डलाधीश हो, बताओ प्रेमरूप परमात्मा कहां है?

हिल्लाल यीशुको उत्तर न दे सका। उसका हृदय सहानुभूतिसे भर गया, यीशुके सिर पर हाथ रख कर उसके आंसू गिरने लगे। बोला- प्रेमरूप परमात्मा तो अवश्य है, आओ मेरे साथ।

और वे चल दिये। यीशुने कहा- कहीं दूर जानेकी क्या आवश्यकता है? परमात्मा प्रेमरूप सर्व व्याप्त है। हमें यह हत्याकाण्ड रोककर अपना हृदय शुद्ध करना चाहिये। मनमें हर एक अशुद्ध मलिन क्रूर विचार निकाल फेंकना चाहिए, फिर हमारा हृदय प्रेमरूप परमात्माका दिव्य मन्दिर हो जायगा।

यीशुकी बातें सुनकर हिल्लाकको ऐसा भास हुआ कि मैं स्वयं बच्चा हूं, और यीशु मेरा गुरु है, मुझे जाग्रत कर रहा है, मुझसे अधिक गंभीर, ज्ञानी है, पवित्र है। हिल्लाकने यीशुके माता पिताको खोज कर उनसे प्रार्थनाकी कि यीशुको हमारे पास छोड़ जाइये। माता पिता मान गये और यीशु हिल्लालके पास रहने लगे। वहां एक वर्ष अध्ययन करनेके पश्चात् नाजरथ वापस आये और अपने पिताके साथ बढ़ई (carpenter) का काम करने लगे।

भविष्यवाणी

प्रतिवर्षकी भांति यीशुकी बारहवीं वर्षगांठ पर पुनः बृहत् भोज हुआ। इस समय यह वार्षिकोत्सव जेरुसलममें हुआ क्योंकि उस समय यीशु अपने मातापिताके साथ नहीं थे। यीशु मन्दिरमें यहूदियों, पुजारियों, आचार्यों, अध्यक्षोंके बीच बैठे थे। दूर दूरसे विद्वान् लोग आये थे। यीशुने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भविष्यवाणी ग्रन्थ पढना आरंभ किया जिसका सारांश इस प्रकार है—

'लोग अपने कुकृत्योंको ईश्वरसे छिपाते हैं, वे रातको कुकृत्य करते हैं और समझते हैं कि हमें कोई नहीं देखता। मूर्खो, ऐसा कबतक होगा? एक ऐसा समय आयेगा कि तुम्हारे कुकृत्योंसे सब हरी खेती जंगल होजायगी, दुष्कर्मियोंका नाश होगा, सत्कर्मियोंको दैवी प्रसाद मिलेगा। जो धर्माध्यक्ष आचार्य, पुजारी गरीबोंको सताते हैं, स्वयं मौज करते हैं वे भी फल पावेंगे। ईश्वर तो किसी प्राणीके रक्तमांसका बलिदान नहीं चाहता, वह तो खुदी, आपा, अहंकारका बलिदान चाहता है। ईश्वर न्यायकारी है। यदि लोग इन नियमोंको नहीं मानेंगे तो दूर देशके लोग आकर हमारे देश पर अधिकार कर लेंगे। ऐसा अन्धेर हमेशा नहीं चल सकता। ऐसा समय आयेगा जब राष्ट्रका पुनर्निर्माण होगा, न्यायकारी प्रेमरूप परमात्माका सम्यक् मन्दिर बनेगा, उसके न्याय, प्रेम, सम्यताका डंका बजेगा। इतना कहकर यीशु अलग होगये।

लोग कहने लगे यह तो देव दूत जैसी बातें बोलता है।

एक सार्वजनिक बृहद् भोजका आयोजन पूर्ण होनेपर नाजरथके वासी जेरुसलमसे वापस चल दिये। भीड भाडमें चलते जब सेमरिया पहुंचे तो मरियम कहने लगी–मेरा बेटा कहां है?

यीशुको किसीने देखा नहीं था। जोसफने सब यात्रियोंमें खोज की, यीशुका पता न लगा। जोसफ और मरियम एक दूसरे लडकेको साथ लेकर जेरुसलम वापस आये और यीशुकी खोज की, फिर भी न पाया। खोज करते हुए मठाधीशके न्यायालयमें आये और द्वारपालोंसे यीशुको पूछा। द्वारपालोंने बताया कि यीशु यहीं धर्माचार्योंसे वाद विवाद शास्त्रार्थ कर रहे हैं।

अन्दर जाकर उन्होंने यीशुको पाया। उनकी मां मरियमने कहा– बेटा, तुम अपने माता पितासे ऐसा वर्ताव क्यों करते हो? हम तुम्हें दो दिनसे खोज रहे हैं। हमें भय था कि तुम पर न जाने क्या मुसीबत आयी हो!

यीशुने कहा– तुम्हें नहीं मालूम? मैं पिताका कार्य कर रहा हूं।

इसके पश्चात् यीशुने सब धर्माचार्योंसे विदा ली। अपने माता पिताके साथ नाजरथ लौटकर लकडीका काम करने लगे।

भारत यात्रा

उडीसा (भारत) में रमण नामक एक राजा थे, वे भक्त और ऐश्वर्य सम्पन्न थे। अपने साथ ब्राह्मण पण्डितोंको लेकर वे ज्ञान जिज्ञासा एवं सत्संगके लिए पश्चिम देशोंको गये थे। उस शान्तिके युगमें लोगोंमें दैवी सम्पदाओंके संग्रहकी विशेष मनोवृत्ति थी अतएव लोग यत्रतत्र सर्वत्र इस हेतु लम्बी यात्राएं करते थे। इस समय मिश्रदेश गुप्त विद्याओं और पाण्डित्य और गुप्त विद्याओंका केन्द्र था।

जेरुसलमके भोज और शास्त्रार्थमें रमण उपस्थित थे। रमण यीशुके प्रवचन तर्क वितर्कसे प्रभावित एवं मुग्ध हुआ और यहुदियोंके आचार्य हिल्लालसे यीशुका परिचय पूछा, सब कुछ जानकर, अपनी मण्डली सहित नाजरथको प्रस्थान किया। नाजरथ पहुंचकर उन्होंने यीशुको देखा। एक मकानकी सीढियों पर अपने काम सम्बंधी सामान लेकर यीशु चढ रहे थे।

उस नगरकी एक बृहद् अतिथि शालामें रमणने सत्संग के उपलक्षमें एक भोज दिया जिसमें यीशु अपने माता पिता सहित निमंत्रित थे। पश्चात् रमण जोसफके अतिथि हो कई दिनों उनके यहां रहे। यीशुके ज्ञानका रहस्य जाननेका प्रयत्न करते रहे। एक दिन जोसफ और मरियमके समक्ष रमणने अपने मनकी आकांक्षा प्रकट की– मैं अपनी संरक्षतामें यीशुको अपने पूर्व देश ले जाना चाहता हूं जहां वे ब्राह्मण पण्डितोंके सम्पर्कमें रहकर ब्रह्मज्ञान प्राप्त करें। यीशुमें भी आकांक्षा जागी, और कई दिनों बाद जोसफ और मरियमने यीशुको पूर्वदेश-भारत-जानेकी अनुमति दे दी। उस समय यीशु तेहरवें वर्षमें प्रवेश कर चुके थे।

बहुत खुश होकर रमणने अपनी मण्डली सहित यीशुको लेकर यात्रा करते हुए सिन्धु नदी पार की और उडीसा पहुंचकर अपने महलमें प्रवेश किया। ब्राह्मण पण्डितोंने यीशु सहित अपने राजाका स्वागत किया।

यीशु जगन्नाथ पुरीमें शिष्य होकर वेदादि पढने लगे।

पुरीमें सत्संग

लोमक्ष नामक ब्राह्मण पण्डितसे पुरीमें यीशुसे प्रेम बढ गया। एक दिन जब दोनों मित्र भ्रमण कर रहे थे लोमक्षने पूछा– सत्य क्या है?

ईशु बोले– सत्य ही एक ऐसा तत्व है जो कभी नहीं बदलता संसारमें दो बातें हैं, एक वास्तविक तत्व, सत्य है, और दूसरा आभमान रूप, जो असत्य है। सत्य तत्व अजन्मा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अनादि है, इसीमें आसमान संसार मायाका उद्गम है। आसमानका जन्म है, उसका नाश अवश्य होगा। आंखोंसे जो स्थूल संसार दीखता है, वह सत्यका रूप, आवरण है, इस रूप, आवरणका नाश होता है, सत्य, तत्वका नहीं। सत्य इन सबका प्राण है, अमर है, उसका नाश नहीं होता न परिवर्तन होता है।

तब लोमशने पूछा– मनुष्य क्या है ?

ईशुने कहा– मनुष्य सत्य और असत्यका विचित्र मिश्रित रूप है। मनुष्य प्राणका स्थूल रूप है। वह स्थूल, संघर्षसे नष्ट हो जाता है, और सत्य रूप मनुष्य शेष रहता है।

फिर लोमशने पूछा– शक्तिके विषयमें कहिये ?

ईशुने उत्तर दिया शक्ति प्रकृतिका रूप है। प्रकृति मूक है, उसमें परिवर्तन नहीं होता; शक्ति प्रकृतिकी क्रिया है, वह क्रिया परिवर्तन शील है। परमात्माकी तरह प्रकृति सर्वशक्तिमान् है। हवामें शक्ति है, लहरोंमें शक्ति है, विद्युत्में शक्ति है, मनुष्यकी भुजामें व आंखोंमें शक्ति है। शक्तिके ये सब रूप प्राण द्वारा संचालित होते हैं और कार्य करते हैं, कार्य हो जानेपर शक्ति नहीं रहती।

पुनः लोमशने विवेकके विषयमें प्रश्न किया। यीशुने बताया विवेक ऐसी चट्टान है जिसके आधार पर मनुष्य अपना निर्माण करता हैं। इसमें अस्ति और नास्तिका रहस्य जाना जाता है कि क्या सत्य है, क्या असत्य है।

पश्चात् लोमशने पूछा ज्ञानके विषयमें कहिये। यीशुने बताया–जब मनुष्यको मालूम हो जाय कि मनुष्य और परमात्मा एक हैं, अलग, भिन्न नहीं, उस अवस्थाको ज्ञान कहते हैं। नास्ति तो नास्ति है, आसमान् शक्ति मायारूप आवरण है भ्रम है, स्वर्ग और नरक कहीं आसमानमें ऊपर नहीं हैं अपितु अपने अन्तस्तलमें हैं, इतना ज्ञानका प्रकाश होनेसे मालूम होजाता है कि परमात्मा सब कुछ है।

लोमशने पूछा-श्रद्धा क्या है ?

यीशुने कहा–परमात्मा और मनुष्यके अस्तित्वका निश्चय ही श्रद्धा है। यह निश्चयकी मनुष्य दैवत्वको प्राप्त होगा इससे मुक्ति प्राप्त होती है, परमपद प्राप्तिकी सीढी है। इसकी तीन अवस्थाएं हैं, प्रथम विश्वास। मनुष्य जब विचार करता है कि अमुक बात सत्य है तो वह विश्वासकी अवस्था है। पश्चात् श्रद्धा, इससे सत्यका निश्चय होजाता हैं, फिर मुक्ति, मनुष्य अपने सत्य रूपको जान लेता है तो मुक्त हो जाता है, विश्वास और श्रद्धा खत्म हो जाते हैं।

> **रूसमें गौका महत्व**
>
> रूसमें गायें नहीं काटी जातीं। गायोंको न काटनेके लिए सरकारकी आज्ञा है। वहांकी सरकारने गौका महत्व समझा है। यह अतः भारतीय सरकारसे भी सानुरोध प्रार्थना है कि वह इस विषयमें रूसका अनुसरण करे और गायके महत्वको जानकर गाय न कटनेके विषयमें यथोचित कार्यवाही करे।

विश्वासका श्रद्धामें लोप होता है, और श्रद्धा मुक्तिमें लीन हो जाती है। दैवत्वको प्राप्त कर मनुष्य जान लेता है कि मैं और परमात्मा एक हैं।

बनारसमें

कुछ समय पश्चात् लोमशके साथ समस्त उडीसा प्रान्तका भ्रमण किया, वे वैश्यों, शूद्रों तथा ब्राह्मणोंसे शिक्षा लेते रहे। इस तरह घूमते फिरते बनारस पहुंचे। बनारस शिक्षा और संस्कृतिका केन्द्र था। दोनों परिव्राजक बहुत दिनों तक बनारसमें रमे रहे। यीशुके मनमें भारतीय चिकित्सा पद्धति सीखनेकी आकांक्षा जाग्रत हुई। वे आयुर्वेदाचार्य उद्रकके शिष्य होकर वहीं रहने लगे। उद्रकने यीशुको जल चिकित्सा, वनस्पति चिकित्सा, मिट्टी व धूपसे, शीतलता और उष्णता, अंधकार और प्रकाशसे, आरोग्य लाभ करना सिखाया। महावैद्य उद्रकने बताया कि 'प्रकृतिका मार्ग ही स्वास्थ्य साधन है। जो प्रकृतिके नियमोंका अनुसरण करता है वह कभी बीमार नहीं पडता। प्रकृतिके नियमोंको तोडना ही पाप है, ऐसा पाप करनेवाला ही बीमार पडता है, जो प्रकृतिके नियमोंको मानता है उसका स्वास्थ्य ठीक रहता है, अन्यथा विकार उत्पन्न होनेसे रोग होता है। विकारको दूर कर स्वास्थ्य लाभ करनेके साधन अनेक हैं।'

'यह शरीर वीणाके समान है, इसकी नाडियां इसके तार हैं। कोई भी तार ढीला हो जाय अथवा अधिक खींचा हुआ हो, अधिक तनाव हो तो वीणाका स्वर विकृत होता है तार टूट जाते हैं, वीणा बेकार हो जाती है, ठीक वही दशा शरीरकी होती है। मनुष्य बीमार होकर मर जाता है।'

प्रकृतिके राज्यमें मनुष्यकी आवश्यकता पूर्ण करनेके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लिए सब कुछ मौजूद है औषधि शास्त्रमें उसका सब वर्णन है। जब मनुष्य शरीर बीमार हो जाय तो शरीरका ही उपचार करना चाहिये, न कि रोगका। मनुष्यका आत्म बल सब रोगोंमें महौषधि है। मनुष्य अपने आत्मबलके अभ्यासके अपने शरीररूपी वीणाके तार दुरुस्त कर सकता है शरीर भरी मिट्टीका पुतला नहीं वह चेतन तत्वसे पंचत्व समन्वित, आत्म रक्षामें सम्पन्न बनाया गया है।

'जब मनुष्यकी श्रद्धा परमात्मा पर जम जाती है, तथा प्रकृति और स्वयं पर वह विश्वास करने लगता है तो उसे अपने विचारोंका महत्व मालूम हो जाता है, वह अपने शब्दोंकी शक्ति जान लेता है। अपने विचार और बोले हुए शब्द ही मन्त्र बन जाते हैं और उनकी शक्तिसे वह शरीरके सब रोग और जीवनमें आनेवाली सब कठिनाइयां दूर कर सकता है।

'जो मनुष्य दूसरे व्यक्तिमें श्रद्धा, आत्म बल जाग्रत कर सके वही चिकित्सक हो सकता है। मनुष्य अपने मुंहसे बोल सकता है, और दूसरा उसकी बातें कानोंसे सुन सकता है, किन्तु आत्मा आत्माके द्वारा पहचाना जाता है, आत्माका व्यवहार आत्मासे, आत्मिक, आडंम्बर हीन होता है।'

'जो व्यक्ति महान् है, उसका आत्मा महान् है। जो निराश लोगोंमें आशाका संचार कर सकता है, जो नास्तिकोंको आस्तिक बना सकता है, वही शक्तिशाली चिकित्सक है। अन्यथा सर्व साधारणमें इतनी क्षमता कहां ? संसारमें हजारों वस्तुएं हैं जिनसे रोग उत्पन्न होता है, और हजारों वस्तुएं ऐसी हैं जिनसे रोग दूर होकर स्वास्थ्य प्राप्त होता है।' एक वस्तु एक व्यक्तिके लिए औषधि रूप सिद्ध होती है, दूसरेके लिए विष तुल्य हो जाती है। एक वस्तुसे एक व्यक्ति स्वस्थ होता है, उसी वस्तुसे दूसरा व्यक्ति मर जाता है। किसीको वनस्पतिसे लाभ होता है किसीको जलसे, तथा किसीको पहाडी वायुसे, कोई आग तापनेसे अच्छा हो जाता है, कोई थोडीसी मिट्टीके उपचारसे; किसीको कहीं तालाब या झरनेमें स्नान करनेसे रोगसे छुटकारा मिलता है, कोई एक बात मन्त्रवत् उपदेश मानकर निरोगी हो जाता है।'

'शारीरिक रोगोंके अतिरिक्त अन्य ताप भी मनुष्यको सताते हैं जो प्रेतों द्वारा होते हैं, इनसे मनुष्य बहुत दुःखी होता है, आन्त हो जाता है। सच्चा चिकित्सक वही है जो रोगीके अन्तस्थल पर शासन करे। अपने आत्म बलसे प्रेतात्माओंका प्रभाव रोगी परसे दूर करे। कोई कोई मृतात्माएं बडी दुष्ट होती हैं, मानवी आत्म बल उनके सामने नहीं ठहरता, परन्तु इस लोकमें भी देवलोकके महात्माओंकी सहायतासे दुष्ट आत्माओंसे मुक्ति मिल जाती है।'

महावैद्य उद्रकने ईसुको जो आयुर्विज्ञान और चिकित्सा शास्त्र बताया उस सबका यही सार है। इतना सब सीखकर ईसुने महावैद्यको शीश नवाया और वहांसे चल दिये।

आक्रमण

काशीसे वापस आकर ईसु जगन्नाथ पुरीमें चार वर्ष रहे। एक दिन ईसु जब पुजारियोंके बीच बैठे हुए थे, तो उसने पूछा– कृपया अपने यहांकी वर्ण व्यवस्था बताइये ? सब लोग ईश्वरकी दृष्टिमें समान नहीं हैं, ऊंच नीच हैं, ऐसा आप लोग क्यों कहते हैं ?

एक आचार्य बोले– आरंभमें ब्रह्माने इच्छा की, वह चातुर्वर्ण्य हुआ। इसमें किसीको शिकायत करनेकी गुंजायश नहीं। ब्रह्मके चार वर्ण– शुक्ल, रक्त, पीत और कृष्ण, क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र हुए, और संसारका व्यवहार करनेके लिए पारस्परिक संगठनके सूत्रमें वे व्यवस्थित हुए।

इतना सुनकर ईसु बोले– रंग रूपसे भेद उत्पन्न कर सब लोगोंको ऊंच-नीच बना देनेवाला परमात्मा न्यायकारी नहीं। परमात्मा सबको बराबर मानता है और न्यायकारी है।

यह सुनकर ब्राह्मण पण्डितोंको क्रोध आया, वे ईसु पर झपटे और चोटकी होती परन्तु मित्र लोमशने हाथ उठाकर पण्डितोंको सावधान किया। लोमश बोला– बिना समझे बूझे आप लोग यह क्या कर रहे हैं ? यह यहूदी युवक परमात्माको जिस प्रकार समझता है उसे पहले आप लोग समझ लें। यदि ईसु सत्य कह रहे हैं तो आप उसका विरोध नहीं कर सकते। यदि असत्य कहें तो उनका कथन निस्सार होना चाहिये। सत्य तत्व तो अमर है।

पंडित शान्त हुए, परंतु एक पंडित बोले– इस यहूदी युवकने मन्दिरमें आकर ब्रह्मकी महत्ता और प्रतिष्ठा पर कलंक लगाया है, यह मृत्यु दण्ड पाने योग्य है।

पण्डितोंने दोनों मित्रोंको वहांसे भगा दिया। वहांसे यीशुने शूद्रोंके पास निवास किया, और उन्हें समदर्शी बननेका उपदेश दिया कि सब मानव भाई भाई हैं, और परमात्मा सबका परमपिता है। (क्रमशः)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वैदिक-सन्देश और विश्वशान्ति

(लेखक— डॉ. विश्वमित्र, सिद्धान्त विशारद)

★

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

ओ३म् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।
होतारं रत्नधातमम् ॥ ऋ. १।१।१;
ओ३म् सपर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर-
ꣳशुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽ-
र्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥ यजु. ४०।८
ओ३म् हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये ॥ ईशोपनिषद् ।

" जो इस विश्वकी रचना, पालन और संहार रूपी यज्ञको चला रहा है, जो सृष्टिके प्रत्येक अणु-अणुको व्याप्त कर रहा है, जो हम मनुष्योंको, देवपूजा अर्थात् आत्माकी उन्नति करना, संगति करण अर्थात् परस्पर सहायता करना और दान अर्थात् स्वार्थ अथवा संकुचित मनोवृत्तिका नाश करना किस प्रकार हो सकता है, यह बता रहा है, ऐसे उस शुभ्र तेजस्वी देवको हम नमस्कार करते हैं। हे प्रभो ! इस यज्ञके कर्ता तुम अकेले ही हो और तुम्हीं इस यज्ञके सर्वस्व हो। कृपा करके हमें भी मानसिक दृढता प्रदान करो, जिससे कि हम इस यज्ञको संगठित रूपमें कर सकें, और यह प्रतीत हो कि हम सब तुम्हारी सन्तानें पृथक् पृथक् रहते हुए भी एक ही हैं। इसीलिए हे सर्व-व्यापक सर्वशक्तिमन्, अनादि, अनन्त, निराकार प्रभो! तुमने हमें शुद्ध प्रेम, दैवीज्ञान और दैवी प्रकाश प्रदान किया है। हम उसका अनुसरण करें। हमें कृपा करके उत्तम बुद्धि प्रदान करो, जिससे हम उस दैवी प्रकाशका उपयोग कर सकें। हे स्वामिन् ! यह सत्य अथवा यथार्थ ज्ञान मनुष्यके अन्दर स्थित धन और ऐश्वर्य प्राप्तिकी इच्छासे ढक दिया गया है. अतः आप हमें सामर्थ्यशाली बनाईये, जिससे कि हम इस सुनहरे पर्देको हटा सकें और सत्यके दर्शन करके वैयक्तिक, राष्ट्रीय और विश्वकी शान्तिको प्राप्त कर सकें।

इत्योम्

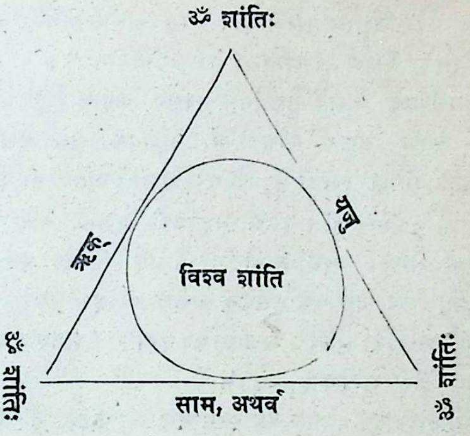

वैदिक-सन्देश

परिचय

विश्वके प्रति शान्ति और प्रेमसे भारतके हृदयका निर्माण हुआ है अब भी भारतके प्रत्येक आर्यके घरमें (जिसे अब गलतीसे हिन्दु परिवार कहा जाता है) प्रत्येक मनुष्य स्त्री और बच्चा सुबह और शामकी प्रार्थना करता है, और अपनी वैदिक मंत्रोंकी अथवा उपनिषद्वचनोंकी प्रार्थनाके दौरानमें " ओ३म् शान्ति " पदका तीन बार उच्चारण करता है, इस तीन बार शान्ति पदके उच्चारणका अर्थ है, (१) वैयक्तिक, (२) सामाजिक अथवा राष्ट्रीय और (३) विश्वकी शान्ति प्राप्त करना। इस तरहकी प्रार्थना उनका स्वभाव ही हो गई, इसलिए हम कह सकते हैं कि शान्तिकी भावना उनके रक्तमें भी बह रही है। अतः भारत ही एक ऐसा देश है, जो विश्वको शान्ति प्रदान कर सकता है। यह एक तथ्य है जो आगेके पृष्ठोंमें दिखाया जाएगा।

संसारकी यह दशा आज औद्योगिक अथवा भौतिकवाद-के कारण ही हुई है, और अबतक पाश्चात्यदेशोंके भी अनेक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकाण्ड विद्वानों और वैज्ञानिकोंने इस बातकी भविष्यवाणी की है कि यदि वे औद्योगिकवाद, साम्राज्यवाद और प्रकृतिवादका अनुसरण करेंगे, तो निश्चयसे एक दिन यह सारा संसार ध्वस्त हो जाएगा। उदाहरणार्थ जर्मनीका एक महान् दार्शनिक आयकॉन (Iokon) अपनी पुस्तक " शैल वी बी क्रिश्चियन्स " (Shall we be Christians) में कहता है " भौतिकवादी संस्कृतिका रूप है, बाहरसे चमक दमक और विशाल पर अन्दरसे तुच्छ और संकुचित, बाहरसे भरपूर ऐश्वर्य पर अन्दरसे आत्मा विहीन "।

इंग्लैण्डका प्रसिद्ध वैज्ञानिक हक्सले कहता है " आजकी उत्तमसे उत्तम सभ्यता भी मनुष्यकी उस दशाको लोगोंके समक्ष रखती है, जो न आदर्शोंकी दृष्टिसे ही ऊंची होती है न स्थिर ही। इससे मनुष्यकी दशामें यदि कोई विकास होनेकी आशा न हो, तो मैं उस दिनका स्वागत करूंगा, जिस दिन एक धूमकेतु निकल कर इस सब भौतिकवादी तत्वोंका एकदम सफाया कर देगा।' (पीपल्स ऑफ एबिस. जेक, लन्दन पृष्ठ. ३१५)

भौतिकवादके विषय वह आगे और भी कहता है ' कोई भी व्यक्ति, जो बडे बडे औद्योगिक केन्द्रोंमें रहनेवाले मनुष्योंकी स्थितिसे परिचित होगा, इस बातको भी अवश्य ही जानता होगा, कि वहांके मनुष्योंकी एक बडी संख्या किस बुरी स्थितिमें रहती है, जिनकी लज्जा समाप्त हो चुकी होती है, निर्दयता पूर्ण कार्योंमें तथा अन्य नशीले पदार्थोंमें ही जिन्हें आनन्दकी अनुभूति होती है, तथा रोग और अनैतिक व्यवहारोंके रूपमें जिन पर दुःख हमेशा छाया सा रहता है ' (यह स्थिति आज भी कई बडे बडे औद्योगिक केन्द्रोंकी है– लेखक)

मि. हावेल अपनी पुस्तक ' दि रिवाइवल ऑफ दि इण्डियन हेण्डीक्राफ्ट ' (The Revival of the Indian Handi Craft) और ' आर्यन रूल ' (Aryan Rule) में लिखते हैं ' किसी देशको समृद्धशाली बनानेके लिए भौतिकवादी उद्योगोंको अपनानेका रास्ता केवल मूर्ख ही बतायेंगे। भारतमें कहीं भी, यहां तक कि भयंकर अकालके समयमें भी, शारीरिक, नैतिक और आत्मिक अवनति नहीं देखी गई, जितनी कि योरोपके औद्योगिक शहरोंमें आज देखी जाती है, इस अवनतिके कारण आधुनिक औद्योगिक प्रणालियां ही हैं।'

इसी प्रकार एडवर्ड कारपेन्टरने, ' सिविलिजेशन, डिसीज ऐंण्ड इट्स क्योर ' (Civilization, disease and its cure) में, रेव. स्टॉक्सने ' दि फेल्योर ऑफ युरोपियन सिविलिजेशन ' (The Failure of European civilization) में, और सुप्रसिद्ध उपन्यासकार मेरी कोरोलीने हमें बार बार, उद्योगवाद, भौतिकवाद और पूंजीवादके विरुद्ध चेतावनी दी।

सुप्रसिद्ध चित्रकार और कवि डॉ. जेम्स एच. कॉन्सिन्स अपने ग्रन्थ ' पाथ टु पीस ' (Path to Peace) में लिखते हैं वैदिक भारतकी सभ्यता आदर्श सभ्यता है, जिसने अनेक साम्राज्योंकी उन्नति और अवनति देखी है। यह मानवताको मुक्तिकी ओर प्रेरित करती है। आज योरोप भी जीवन और सच्ची मानवताकी खोज करते हुए भारतकी ओर मुड रहा है। वैदिक मस्तिष्कसे प्रादुर्भूत होनेवाली सभ्यता, जो आजसे हजारों वर्ष पूर्व भी ज्ञात थी, आन्तरिक अनुभव पर आधारित (Intuitional) होनेके कारण संश्लेषणात्मक (Synthetical) थी। इसी संश्लेषणात्मक वैदिक आदर्शके आधार पर ही, जो पारस्परिक विरोधको पूर्णतया समाप्त कर देता है, तथा अपनी सहानुभूतिसे घृणा और द्वेषको भी भस्म कर देता है, इस पृथ्वीको स्वर्गके समान या उसका प्रतिरूप (Image) बनाया जा सकता है '।

एक विचारपूर्ण विवेचनासे यह बात ज्ञात हो जाएगी कि मैं आगेके पृष्ठोंमें जो कुछ कहूंगा, वह उपरोक्त विचारोंकी ही एक प्रकारसे व्याख्या होगी।

भारत, विशेषकर वैदिक भारत, अपनी एकात्मताके लिए प्रसिद्ध है, कि वह जो कुछ कहता है वही करता है। इसलिए उसने सभी विनाशकारियोंका सामना किया, और आरम्भसे ही संसारको विनाशसे बचाया, और यह भी निश्चित है कि जब तक संसारका अस्तित्व है तब तक वह बचाता रहेगा। +

+ इस प्रसंगमें इस बातका ज्ञान कर लेना उपयुक्त रहेगा कि वैदिक सिद्धान्तके अनुसार एक पूरा सृष्टि संवत् चार अरब बत्तीस करोड (४,३२,०००००००) वर्षोंका है, जिनमें अभी तक एक अरब, सत्तानवे करोड, उन्तीस लाख, उन-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इसलिए आगेके पृष्ठोंमें हमने विश्व शान्तिके लिए वेदों द्वारा, विश्व शान्ति ही जिसका मुख्य उद्देश्य है, दिखाये गए मार्ग और साधनोंका संक्षिप्त रूपमें विचार किया है।

शान्ति क्या है ?

सबसे प्रथम यह आवश्यक है कि हम शान्तिका तात्पर्य क्या है ? यह जानें। शान्तिका अर्थ युद्धका न होना ही नहीं है, क्योंकि युद्धके बिना भी देशमें अशान्ति बनी रह सकती है। संसारमें युद्ध अनिवार्य है। यह संसार अच्छे और बुरे दोनों तत्वोंसे बना है, और इन दोनोंमें विरोध हमेशा चलता रहता है। वेदोंमें इसीको इन्द्र और वृत्रके युद्धोंके प्रतीक रूपमें दिखाया है। इन्द्र और वृत्रका विरोध वस्तुतः ज्ञान–अज्ञान, अन्धकार–प्रकाश और अच्छाई–बुराईका विरोध है। वेदमें इस संसारको ' विदथ ' युद्ध क्षेत्र कहा है, जहां पर निवास करनेके लिए मनुष्यको अशुभ शक्तियोंसे युद्ध करना पडता है। संसारके इतिहासको शुरुसे पढ डालिये, तो आप कोई भी समय ऐसा नहीं पायेंगे जब युद्ध न हुआ हो। भगवद्गीता हमारे कथनका प्रमाण है। तब शान्तिका तात्पर्य क्या है ? क्या यह मिथ्या है ? नहीं; शान्ति युद्धके दौरानमें भी बनी रह सकती है। कितने आश्चर्यकी बात है, पर है सत्य। ' **अतः शान्ति उस अवस्थाका नाम है, जिसमें, मनुष्य, समाज, देश और संसारके सब अवयव शक्तिशाली हों, स्वस्थ हों और एक रूप होकर सहकारिता पूर्वक अपने अपने कामोंको करें। बाहरी विरोध होने पर भी आन्तरिक विरोध न हो जिससे कि मनुष्य, समाज, राष्ट्र और संसार अपने नियत उद्देश्यको प्राप्त करनेके लिए आगे बढ सके।** किसी समय ऐसा भी देखा जाता है कि बाह्य और आन्तरिक वातावरण सर्वथा शान्त रहते हैं, कभी ऐसा भी समय आता है जब कि बाह्य वातावरण अशान्त तथा आन्तरिक वातावरण शान्त होता है, पर ऐसा समय कभी भी देखनेको नहीं मिलता जब कि बाह्य वातावरण शान्त और अन्दरका वातावरण अशान्त रहता हो। ऊपर कही गई अवस्थाओंमें दूसरी अवस्थाको गीतामें शान्ति पूर्ण बताया है। पर यह अवस्था तभी हो सकती है जब कि धर्मकी संस्थापनाके लिए युद्ध किया जाए। उदाहरणके लिए प्रत्येक विद्वान् यह जानता है कि जब तक प्राण शक्ति अन्दरसे बाहरकी ओर प्रवाहित होती रहती है तब तक बाहरी प्रदेशमें अशान्ति होते हुए भी, अन्तः केन्द्रमें शान्ति बनी रहती है और मनुष्य बाहरी विघ्न बाधाओंकी परवाह न करते हुए बिना किसी रुकावटके अपने दैनिक कार्य करता चला जाता है। यह शान्तिकी अवस्था है। पर जब अन्दरसे प्राण शक्तिका प्रवाह रुक जाता है तो मनुष्य बीमार पड जाता है। इन्द्रियोंके अशक्त हो जानेके कारण मनुष्य काम नहीं कर सकता। यह अशान्तिकी अवस्था है। यही अवस्था केन्द्रीय और राज्य सरकारोंके विषयमें भी है। **इसलिए मनुष्य, समाज, राष्ट्र और विश्वकी किसी प्रकारकी खलबली रहित अन्तरवस्थाका नाम शान्ति है।**

यहां एक शंका उत्पन्न हो सकती है कि जब बाहर युद्धका वातावरण हो तो अन्दर शान्ति कैसे बनी रह सकती है ? इसका उत्तर है कि उस अवस्थामें भी शान्ति बनी रह सकती है क्योंकि शक्तिका प्रवाह अन्दरसे बाहरकी ओर चलता है न कि बाहरसे अन्दरकी ओर। शान्तिका होना, न होना तीन बातों पर निर्भर करता है, (१) युद्धका आरम्भ क्यों हुआ, (२) युद्ध करनेका तरीका (३) प्रशिक्षण, जो वहांकी प्रजाको दिया गया है। अभी तक हुए संसारके महायुद्धोंमें सबसे भयंकर युद्ध महाभारतका था। इसकी शुरुआत धर्मकी स्थापनाके लिए हुई थी। जब इस युद्धसे बचनेका और कोई मार्ग शेष नहीं रहा, तब लाचार होकर यह संग्राम करना पडा। यह संग्राम राजधानीसे

चास हजार, साठ (१,९७,२९,४९,०६०) के करीब वर्ष बीत चुके हैं, और दो अरब, चौंतीस करोड, सत्तर लाख, पचास हजार, नौ सौ चालीस (२,३४,७०,५०,९४०) शेष हैं। मद्राससे प्रकाशित होनेवाले ' इंडियन एक्सप्रेस ' के २७–१२–१९५५ के अंकमें एक लेख प्रकाशित हुआ था, जिसमें बताया था कि वैज्ञानिकोंने अब यह अनुमान लगाया है कि संसारकी अब तककी आयु पांच अरब चालीस करोड (५,४०,०००००००) है। पर हमारे वैदिक ऋषियोंकी काल गणना वैज्ञानिकोंकी अनुमानित गणनासे कहीं अधिक शुद्ध है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बहुत दूर हुआ। इस संग्राममें धर्म और अधर्मसे सम्बन्ध रखनेवाले और उनकी सहायता करनेवाले दलोंने ही भाग लिया था। अन्य सामान्य जनता पर इस संग्रामका कोई प्रभाव नहीं पडा। वे अपने कार्य यथावत् करते रहे। उस समय बम्ब अथवा प्रक्षेपणास्त्र शहरोंपर फेंककर निर्दोष जनताकी आजकी तरह हत्या नहीं की जाती थी। इसके अलावा जनता यह जानती थी कि यह संग्राम धर्मकी स्थापनाके लिए ही हो रहा है। अतः उन्हें पूरा विश्वास था कि धर्मकी स्थापना या उन्नति अवश्य होगी।

इसलिए वे अपना काम शान्ति पूर्वक करते चले जाते थे। देशकी अन्तरात्मा अशान्ति पूर्ण नहीं होती थी। शक्तिका प्रवाह अन्दरसे बाहरकी ओर बहता था। अतः बाह्य प्रदेशकी हलचलें अन्तर्देश पर प्रभाव नहीं डालती थीं। इन सबका कारण वह प्रशिक्षण था जो शुरुसे ही लिया जाता था। इसीका दूसरा उदाहरण हमें चन्द्रगुप्त मौर्यके कालमें मिलता है। इतिहास प्रसिद्ध महान् राजनीतिज्ञ चाणक्यने बाह्य आक्रमणकारियोंके साथ होनेवाले युद्धका संचालन इतनी शान्तिसे किया, कि देशकी जनताने इस बातका कभी अनुभव नहीं किया कि कहीं लडाई भी चल रही है। जीवन-सामग्रियोंके भाव कभी ऊँचे नहीं चढे, जैसा कि आज कल होता है। प्रजाको किसी प्रकारका दुःख नहीं होता था। हिरोशिमाके समान शहरोंको जलाया नहीं जाता था। सामान्य प्रजाको किसी प्रकारकी हानि पहुंचाये बिना ही अयोग्य राजाको उतार कर योग्य राजाको सिंहासन पर बैठाया जाता था। संग्राम शहरसे मीलों दूर होते थे। इस प्रकार केन्द्रमें शान्ति रहती थी। (क्रमशः)

लखनऊ विद्यापीठकी एम्. ए. की

परीक्षाके लिये ऋग्वेदके सूक्त

लखनऊ विद्यापीठकी एम्. ए. (M. A.) की परीक्षामें ऋग्वेदके प्रथम मंडलके पहिले ५० सूक्त रखे हैं। हमारा हिंदी अर्थ, भावार्थ, स्पष्टीकरण आदि नीचे लिखे सूक्तोंका छप कर तैयार है—

				मूल्य	डा. व्य.
१ मधुच्छंदा	ऋषिके	१२०	मंत्र	१)	।)
२ मेधातिथि	,,	२२०	,,	२)	।)
३ शुनःशेप	,,	१०७	,,	१)	।)
४ हिरण्यस्तूप	,,	९६	,,	१)	।)
५ कण्व	,,	१२५	,,	२)	॥)

यहांतक ५० सूक्त ऋग्वेदके प्रथम मंडलके हैं।

६ सव्य	ऋषिके	७२	मंत्र	१)	।)
७ नोधा	,,	८५	,,	१)	।)
८ पराशर	,,	१०५	,,	१)	।)
९ गौतम	,,	२१४	,,	२)	॥)

				मूल्य	डा. व्य.
१० कुत्स	ऋषिके	२५१	मंत्र	२)	॥)
११ त्रित	,,	११२	,,	१॥)	।=)

यहांतक ऋग्वेदके प्रथम मंडलके सूक्त हैं।

१२ संवनन	ऋषिके	१९	मंत्र	॥)	=)
१३ हिरण्यगर्भ	,,	१२७	,,	१)	।)
१४ नारायण	,,	३०	,,	१)	।)
१५ बृहस्पति	,,	२०	,,	१)	।)
१६ वागम्भृणी	ऋषिकाके	८	,,	१)	।)
१७ विश्वकर्मा	ऋषिके	१४	,,	१)	।)
१८ सप्तऋषि	,,	७	,,	॥)	=)
१९ वसिष्ठ	,,	९४५	,,	७)	१॥)
२० भरद्वाज	,,	७७३	,,	७)	१॥)

ये पुस्तक सब पुस्तक-विक्रेताओंके पास मिलते हैं।

मन्त्री— स्वाध्यायमंडल, पोस्ट- 'स्वाध्यायमंडल (पारडी)' पारडी, जि. सूरत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मनु

लेखक— श्री ना. गो. चापेकर

★

'मनु' शब्द शुद्ध अथवा विकृत रूपमें ऋग्वेदके करीब ५० स्थलों पर आया है। 'मनु' शब्दके कथन करनेवाले सूक्तोंकी संख्या ४३ है। ऋग्वेदमें कोई भी मण्डल ऐसा नहीं है, जिसमें मनु शब्द न आया हो। इस विषयमें मनु और अंगिरस दोनों शब्द समान हैं। इन दोनों शब्दोंमें 'मनु' शब्दकी अपेक्षा 'अंगिरस' शब्द अधिक संख्यामें आया है। ऋग्वेदमें मनु शब्द विभिन्न सामर्थ्यके रूपमें आया है।

मेरे विचारमें ऋग्वेदकी व्याख्या, अन्य ग्रन्थोंकी, जिन्होंने सायणको अतिशय प्रभावित किया है, सहायताकी अपेक्षाके बिना केवल ऋग्वेदकी सहायतासे हो की जानी चाहिये। ऋचाओंके बहुत समय बाद ब्राह्मण ग्रंथोंका प्रणयन हुआ है, और इस बीचके समयकी सारी परम्पराओंका ब्राह्मण ग्रंथोंमें पाया जाना स्वाभाविक ही है। कभी कभी ऐसा होता है कि परिवर्धन (Addition) से उस ग्रंथका मूल ही समाप्त हो जाता है। इसीलिए मैं मंत्रोंकी व्याख्या मंत्र द्वारा ही करनेका पक्षपाती हूं।

मनु निस्सन्देह एक मनुष्यका नाम है। इसके अतिरिक्त मनु वंशोत्पन्न लोगोंके लिए भी मनु शब्दका प्रयोग हुआ है। उदाहरणके लिए—

स्याम वो मनवो देववीतये ॥ ऋ. १०।९६।१२;

(हे देवो ! हम मनव तुम्हारे लिए यज्ञ सम्पादन करनेके लिए जीवित रहें)।

यहां 'मनव' का अर्थ 'मनुष्य' करना, जैसा कि सायण करता है, अनुचित है। 'मनव' 'मनु' का कर्त्ताका बहुवचन है। इस प्रकारकी व्याख्याके लिए अन्य भी कई शब्द प्रमाण रूपमें प्रस्तुत किए जा सकते हैं। जैसे—

वसिष्ठासः पितृवद्वाचमक्रत ॥ ऋ. १०।६६।१४

तं त्वा शुचिप्रदस्पते स्तोमैर्वर्धन्त्यत्रयः

ऋ. ५।२२।४;

इन दोनों मंत्र भागोंमें 'वासिष्ठासः' और 'अत्रयः' पद आये हैं, जो क्रमशः वसिष्ठ वंशोत्पन्न तथा अत्रि वंशोत्पन्न प्रजाओंके लिए आये हैं। इसी प्रकार मनुके वंशमें होनेवाला भी मनु ही है।

वामं घत्थ मनवे विश्ववेदसे ॥ ऋ. ८।२७।२१

इस मंत्र भागमें आया हुआ मनु सम्भवतः मूल मनुका ही उत्तराधिकारी है।

ऋ. १।९६।२ में आया है 'अग्निः मनूनां प्रजाः अजनयन्' जिसका शब्दार्थ है कि 'अग्निने मनुओंकी प्रजाओंको जन्म दिया'। मेरे विचारमें इसका तात्पर्यार्थ यह है कि मनुओंने पवित्र अग्निको प्रज्वलित रखा।

जब हम यह देखते हैं कि मनुके बारेमें क्या कहा गया है। मनुने पवित्र अग्निको सुरक्षित रूपमें रख रखा था, जिसकी वह रोज पूजा किया करता था। वह स्तोत्रोंका प्रणेता था (ऋ. २।१०।६) उसने कई सूक्तोंको बनाया है। सावर्णि मनु और मनु ये दोनों पृथक् पृथक् हैं।

त्वं होता मनुर्हितो वन्हिरासा विदुष्टरः।
अग्ने यक्षि दिवो विशः ॥ ऋ. ६।१६।९;

(भरद्वाज ऋषि कहते हैं हे अग्ने ! मनुने तुझे होता समझकर तेरी स्थापना की है। तू मुंहसे हवि के जानेमें बड़ा कुशल है, इसलिये तू देवोंको तृप्त कर)।

मनुष्वत् त्वा निधीमहि मनुष्वत् समिधीमहि ॥
ऋ. ५।२१।१;

(आत्रेय कहते हैं 'हे अग्ने ! हमने मनुके समान तुम्हारी स्थापना की है और मनुके समान ही हम तुम्हें प्रज्वलित करते हैं।

मनुष्वदग्ने मनुना समिद्धं समध्वराय सदमिन्महेम ॥ ऋ. ७।२।३;

(वसिष्ठ कहते हैं 'मनुके द्वारा प्रज्वलित की हुई अग्निकी हम सदा पूजा करते हैं)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उपरोक्त तीनों मंत्रोंसे यह सिद्ध होता है कि सर्व प्रथम मनुने अग्नि पैदा की, जलाई और प्रतिदिनकी पूजाके लिए उसे सुरक्षित रखा. उसी अग्निको आगे जाकर भरद्वाज, आत्रेय और वसिष्ठने भी चालू रखा।

यो हव्यान्यैरयता मनुर्हितो देव आसा सुगंधिना। ऋ. ८।१९।२४

(मनुके द्वारा स्थापित जो अग्नि अपने सुगंध युक्त मुखसे हविको देवोंकी तरफ ले जाता है) इस मंत्रके ऋषि सौभरि काण्व उपरोक्त कथनके साक्षी हैं। इस मंत्रमें आए हुए 'यः हव्यानि ऐरयता मनुर्हितो देव आसा सुगंधिना ' पद ध्यान देने योग्य हैं। मनु द्वारा स्थापित अग्नि अपने सुगंधित मुख द्वारा हवि देवों तक पहुंचाती है। यह सम्भव है कि यह सुगन्धी अग्निमें डाले हुए चन्दनके कारण हो? यदि ऐसा है, तो यह मनु और जरथुस्त्रके अनुयायियोंके सम्बन्धकी ओर संकेत करता है।

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्त होतृभिः। ऋ. १०।६३।७;

(सर्व प्रथम वैवस्वत मनुने हवियोंको देकर और अग्नि प्रदीप्त करके श्रद्धायुक्त मनसे सात ऋत्विजोंके साथ तुम्हारी (अग्निकी) स्तुति की।) इस मंत्रसे ज्ञात होता है कि मनु ही प्रथम व्यक्ति था जिसने सात ऋत्विजोंकी सहायतासे यज्ञका सम्पादन किया।

उसके यज्ञकी दूसरी विशेषता यह थी कि उसके द्वारा पूजित देव, प्रसिद्ध इन्द्र, वरुण, मरुत् आदि देवोंसे, भिन्न थे। इसके अतिरिक्त उसके तेंतीस देव तीन लोक द्यु, अन्तरिक्ष और पृथ्वीमें समान रूपसे बंटे हुए थे। जैसा कि निम्न मंत्रसे पता भी चलता है—

ये देवासो दिव्येकादशस्थ पृथिव्यामध्येकादशस्थ।
अप्सुक्षितो महिनैकादशस्थ ते देवासो यज्ञमिमं जुषध्वम्॥ ऋ. १।१३९।११

(हे देवो! द्युलोकमें तुम ग्यारह हो, पृथिवीमें ग्यारह हो, तथा अपने सामर्थ्यसे अन्तरिक्षमें तुम ग्यारह हो, तुम सब हमारे इस यज्ञको स्वीकार करो)। इन देवोंका सम्बन्ध आदित्य रुद्र और वसुसे था, ऐसा ऋग्वेदके निम्न मंत्रमें बताया है—

त्वमग्ने वसूँरिह रुद्राँ आदित्याँ उत।
यजा स्वध्वरं जनं मनुजातं घृतप्रुषम्॥
ऋ. १।४५।१;

(हे अग्ने! तू यहां वसु, रुद्र, आदित्य, घी की वृष्टि करनेवाली तथा उत्तम प्रकारसे यज्ञ करनेवाली मनुकी प्रजाओंका यजन कर।) यह उत्तम होगा यदि हम उपरोक्त मंत्रोंके साथ

उदीरतामवर उत् परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः। असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु॥ ऋ. १०।१५।१;

(जो पृथ्वी पर रहनेवाले देव हैं वे ऊँचे स्थान पर जाकर रहें, जो स्वर्ग या ऊँचे स्थान पर रहनेवाले हैं वे नीचे कभी न गिरें जो मध्यम स्थानके आश्रयसे रहनेवाले देव हैं; वे भी ऊँचे स्थानको जाएं, जो सोम पीनेवाले, प्राणरूप, शत्रुरहित तथा सत्य स्वरूप पितर हैं वे हमारी रक्षा करें।)

इस मंत्रका भी विचार करें। ये देव पितृदेव हैं। मनुके देवोंकी एक विशेष संख्या थी। मनुकी पूजा पद्धति भी एक विशेष प्रकारकी थी। ऋग्वेद ८।३० के निम्न मंत्रमें कवि कहता है—

मा नः पित्र्यान्मानवादधि दूरं नैष्ट परावतः॥

(अपने पूर्वज मनुके मार्गसे दूर न हट जाएं)

मनुको वेद मंत्रोंमें ग्रामणी भी कहा है (सहस्रदा ग्रामणीर्मा रिषन्मनुः। ऋ. १०।६२।११) जिसका अर्थ गांवका मुखिया होता है। इस 'ग्रामणी' शब्दकी परिभाषा ऋग्वेदके १०।१०७।७में की है (दक्षिणावान् ग्रामणीरग्रमेति) कि 'जो धनका दान करता है वह ग्रामणी है'। मनुको यज्ञके लिए आमंत्रण दिया जाता है, और तब ऋषि कहता है 'मैं उस मनुष्यका आदर करता हूं जो यज्ञमें सर्व प्रथम आकर राजाके समान लोगोंमें धन बांटता है'। यहां मनुको राजा कहा है, और धर्मशास्त्रोंके अनुसार एक क्षत्रिय ही राजा हो सकता है, इसलिए मनु एक क्षत्रिय था। यह इस बातको दिखाता है कि मूल किस प्रकार समयके प्रभावसे विकृत हो गया। यह सावर्णि मनु है, सवर्णका पुत्र। वह मंत्र कर्त्ता मनुके समकालीन नहीं था। क्योंकि मनु प्रार्थना करता है कि देव गण सावर्णि मनुको दीर्घायुवाला बनावें।

सावर्णे देवाः प्रतिरन्त आयुः॥ ऋ. १०।६२।११

यह सावर्णि मनु बहुत दानी था और लोगोंको बहुत धन दिया करता था। वह बड़ा प्रभावशाली व्यक्ति था। तथा—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उत दासा परिविषे स्मद्दिष्टी गोपरीणसा ।
यदुस्तुर्वश्च मामहे ॥ ऋ. १०।६२।१०

इस मंत्रसे ऐसा प्रतीत होता है, कि दो दास तुर्व और यदु सावंणि मनुके दैनिक भोजनके लिए दो गायें भेंट स्वरूप दिया करते थे।

अत्रि, कण्व, प्रियमेध, अंगिरा, दध्यङ् और मनु ये सब पूर्व कालके ऋषि थे, क्योंकि—

दध्यङ् ह मे जनुषं पूर्वो अङ्गिराः प्रियमेधः कण्वो अत्रिर्मनुर्विदुः । ॥ ऋ. १।१३९।९;

इस मंत्रका ऋषि कहता है कि ये सभी ऋषि उसके जन्मको जानते थे। यहां (पूर्वे मनुर्विदुः) पर सायणकी व्याख्या उचित है। यद्यपि 'मनु' शब्द एक वचन है, पर इससे बहुवचनका बोध होता है। यहां महत्वकी बात यह है कि जब उपरोक्त ऋचाकी रचना हुई थी तब मनु और ऊपर कहे गए उसके साथी जीवित नहीं थे।

मनुकी एक और विशेषता 'पिता' शब्दसे व्यक्त होती है।

यामथर्वा मनुष्पिता दध्यङ् धियमत्नत
ऋ. १।८०।१६

(जिस बुद्धिको पिता मनुने प्राप्त किया)

यच्छं च योश्च मनुरायेजे पिता ॥ ऋ. १।११४।२;

(जिस सुख और शान्तिके लिए पिता मनुने यज्ञ किया) इन दोनों मंत्रोंमें पिता शब्द मनुके विशेषणके रूपमें प्रयुक्त हुआ है, और—

यानि मनुरवृणीता पिता नः । ऋ. २।३३।१३

(जिस सुखका हमारे पिता मनुने वरण किया था) इस मंत्रमें मनुको गृत्समदका पूर्वज बताया है। इस मंत्रमें ऋषि मरुतोंसे औषधियोंकी याचना करता है। इस विषयमें अन्य भी प्रमाण हैं जैसे—

मा नः पिथ्यान्मानवादधि दूरं नैष्ट परावतः ॥
हम पिता मनुके रास्तेसे भटक न जाएं।
यस्य द्वारा मनुष्पिता देवेषु धिय आनजे॥
ऋ. ८।६३।१

(जिस इन्द्रकी सहायतासे पिता मनुने देवोंसे बुद्धि प्राप्त की) इनमेंसे प्रथममें आये हुए 'मानव' का अर्थ है 'मनु'। यह 'पथ' का विशेषण है। इसका अर्थ है पूर्वज मनुके द्वारा निश्चित किया हुआ मार्ग। पथका अर्थ है मनुके द्वारा बनाये गए नियम। पर मेरे विचारमें 'मानव धर्मशास्त्र' की उत्पत्ति यहींसे मानना अयुक्ति युक्त होगा।

ऋग्वेद स्तोत्रोंकी रचनाके समयसे ही मनुका नाम आदर भावसे लिया जाता था। ऋषि अपने आनन्दमें स्वयंसे ही कहता है—

अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहं कक्षीवाँ ऋषिरस्मि विप्र।
अहं कुत्समार्जुनेयं न्यृञ्जेऽहं कविरुशना पश्यता मा ॥
ऋ. ३।२६।१;

मैं मनु हो गया हूं, मैं सूर्य और बुद्धिमान् कक्षीवान् ऋषि हूं। मैंने अर्जुनके पुत्र कुत्सको अधिकारमें किया है, और मैं ही उशना कवि हूं मुझे देखो।

इस बातकी कल्पना करना कठिन है कि मनु अथवा कक्षीवान् और सूर्यमें क्या क्या समानतायें थीं

मेयिंक्सके अनुसार मनुके देवता अन्य देवताओंसे भिन्न हैं। यहां द्रष्टव्य यह है कि आगेके मंत्रोंमें ऋषि आदित्य, रुद्र और वसुओंसे उसके स्तोत्रको स्वीकार करनेकी प्रार्थना करता है। ये ही मनुके देवता थे। वे असमर्थ थे और यज्ञके द्वारा आने जाते थे।

ऋग्वेद ५।४५।६ के निम्न

यथा मनुर्विशिशिप्रं जिगाय ॥

(जिसकी सहायतासे मनुने विशिशिप्रको जीता) मंत्रमें मनु शब्द अपने मूलार्थमें ही प्रयुक्त हुआ है। मनु शब्द 'मन्' (विचार करना) धातुसे बना है। अतः मनुका अर्थ है विचार करनेवाला।

ऋग्वेदके १।४५ में आए हुए निम्न—

त्वमग्ने वसूँरिह रुद्राँ आदित्यां उत।
यजा स्वध्वरं जनं मनुजातं घृतप्रुषम् ॥ १ ॥

मंत्रका तात्पर्यार्थ समझना मुश्किल है। इसमें प्रार्थना की गई है, कि अग्नि अपनी हवि वसु, रुद्र, आदित्य और मनुसे उत्पन्न होनेवालोंको दे। इससे मालूम पड़ता है, देवोंके साथ मनुओंकी भी पूजा की जाती थी। पर है यह असाधारण बात। इस ऋचासे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मनुको भी देवताओंके बराबर स्थान दिया जाता था, और उसका देवोंके समान ही आदर किया जाता था।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ऋग्वेदमें तीन ऋचायें ऐसी हैं जो विशेषरूपसे हमारा ध्यान खींचती हैं। वे ऋचायें निम्न हैं—

त्वमग्ने मनवे द्यामवाशयः पुरूरवसे सुकृते सुकृत्तरः। श्वात्रेण यत् पित्रोर्मुच्यसे पर्या ऽऽत्वा पूर्वमनयन्नापरं पुनः॥ ऋ. १।३१।४;

(हे अग्ने ! तूने मनुके लिए द्युलोकमें गर्जनाकी, और उत्तम कर्म करनेवाले पुरुरवाके लिए उत्तम काम किया। जब तू घर्षणकी सहायतासे अपने पितरोंसे छूटकर बाहर आता है, तब तुझे फिर आगे ले जाया जाता है।

वधीं वृत्रं मरुत इन्द्रियेण स्वेन भामेन तविषो बभूवान्। अहमेता मनवे विश्वश्चन्द्राः सुगा अपश्चकर वज्रबाहुः॥ ऋ. १।१६५।८

(इन्द्र कहता है– हे मरुतो ! मैंने वृत्रका वध किया मैं इन्द्रिय सामर्थ्यसे और अपने क्रोधसे बलवान् हुआ, मैंने ही सबको आनन्द देनेवाले, सरलतासे बहनेवाले इन जलोंको मनुके लिए उत्पन्न किया, मैं वज्र बाहु हूं)। तथा—

दशस्यन्ता मनवे पूर्व्यं दिवि यवं वृकेण कर्षथः। ता वामद्य सुमतिभिः शुभस्पती अश्विना प्रस्तुवीमहि॥ ऋ. ८।२२।६;

(हे अश्वि देवो ! पहलेसे ही आकाशमें रहनेवाले जलोंको तुम मनुके लिए देते हो, तथा हल चलाकर जौ पैदा करते हो, इन तुम दोनोंकी मैं उत्तम स्तोत्रोंसे स्तुति करता हूं।

इन मंत्रोंमें मुख्य बातें ये हैं, अग्निने बडी भारी गर्जना की, इन्द्रने पानीको बहाया और अश्वि देवोंने जौके लिए भूमिपर हल चलाया। और यह सब कार्य मनुके लिए किए गए। ऊपरकी घटनायें यह बताती हैं कि उपरोक्त सभी कार्य सृष्टिके आदिमें या बादमें हुए। इसके साथ हमें यह भी ध्यान रखना चाहिये कि अन्य ऋषियोंके लिए भी देवताओं द्वारा पानी बहाया गया है। ऊपरके वर्णनोंके आधार पर प्रलयका विचार केवल काल्पनिक ही होगा।

मेरे विचारमें, जो कुछ मनुके विषयमें कहने योग्य था, मैंने कह दिया। इससे इस निर्णय पर पहुंचा जा सकता है कि मनु एक व्यक्ति था।

वेदकी पुस्तकें

	मूल्य रु.		मूल्य रु.
ऋग्वेद संहिता	१०)	यजुर्वेद वा. सं. पादसूची	१॥)
यजुर्वेद (वाजसनेयि संहिता)	४)	ऋग्वेद मंत्रसूची	९)
सामवेद	३)	अग्नि देवता मन्त्र संग्रह	६)
अथर्ववेद	६)	इन्द्र देवता मन्त्र संग्रह	७)
(यजुर्वेद) काण्व संहिता	५)	सोम देवता मन्त्र संग्रह	३)
(यजुर्वेद) मैत्रायणी संहिता	१०)	मरुद्देवता मन्त्र संग्रह	२)
(यजुर्वेद) काठक संहिता	१०)	दैवत संहिता (तृतीय भाग)	६)
(यजुर्वेद) तैत्तिरीय संहिता, कृष्ण यजुर्वेद	१०)	सामवेद कौथुम शाखीयः ग्रामगेय (वेय प्रकृति) गानात्मकः	६)
यजुर्वेद-सर्वानुक्रम सूत्र	१॥)		

मूल्य के साथ डा. व्य., रजिस्ट्रेशन एवं पेकींग खर्च संमिलित नहीं है।

मंत्री— स्वाध्यायमण्डल, पोस्ट- 'स्वाध्याय-मण्डल (पारडी)' पारडी [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपनी मातृभूमिको ही अपनी श्रद्धाका केन्द्र बनाओ

(श्री गुरुजी)

★

[आज विश्वके रंगमंच पर भारतके साथी और दुश्मन कौन-कौनसे राष्ट्र हैं, यह आसानीसे देखा जा सकता है। उत्तरमें चीन, पश्चिमोत्तरसे पाकिस्तान, पश्चिमसे पुर्तगाल सभी दिशाओंसे भारत पर संकटकी आंधियां बडे जोर शोरसे आ रही हैं, उनका पौरुषतासे मुकाबला करना प्रत्येक भारतवासीका कर्तव्य है। अतः आवश्यक है कि हम आज आपसी झगडोंको छोडकर संघटित होकर अपने शत्रुओंको ललकारें और दिखावें कि भारत वासियोंमें पौरुषताकी कमी नहीं है। आइये, हम सब मातृभूमिको अपनी श्रद्धाका केन्द्र बनायें, और मातृभूमिकी रक्षाके लिए कटिबद्ध हो जाएं। -सम्पादक]

यह जो अपना हिन्दु समाज है, उसको संघटित करना ही हमारा उद्देश्य है। अपना एक भिन्न दल बनाना नहीं। विभिन्न दलोंको उत्पन्न करनेवाले विचारोंके लिए अपनी संस्कृतिमें कोई स्थान नहीं है। दलका निर्माण कर उसको प्रभावशाली बनाकर समस्त समाजको अपने अधिकारमें करना ही तानाशाही है। पर यह तानाशाहीका विचार अभारतीय है, अहिन्दु है, और अहिन्दु विचार हिन्दुओंके संगठनके कार्यमें कैसे उपयोगी हो सकता है ?

इसलिए मैंने कहा कि अपने समाजको संगठित करना है। पर अपना समाज, जिसका हमें संगठन करना है, बहुत विशाल है, उसके रहन-सहन, खान-पानकी पद्धति भिन्न भिन्न है, उपासनाकी पद्धति भिन्न-भिन्न हैं, । केवल बाह्य व्यवहारको देखनेवालोंको, यह समाज एक है, यह कभी प्रतीत हो ही नहीं सकता। पर केवल बाह्य व्यवहारसे किसी समाजके वास्तविक स्वरूपका परिज्ञान नहीं हो सकता। संकुचित विचारवालेको, यह समाज एक कैसे हो सकता है, यह संभ्रम होता है। ऐसे इस विशाल समाजको हमें संघटित करना है। पर क्या हम आज कह सकते हैं कि हमने इस कार्यको बडे पैमाने पर किया है ? अपने कार्यों-को देखते हुए ऐसा नहीं कहा जा सकता। इसीलिए अपने कार्यको विस्तार देनेके लिए हमें निश्चय करना पडेगा।

अब हमें यह विचार करना पडेगा कि इतने विशाल समाजको संघटित करनेके लिए हमें क्या करना है ? हम सब अलग अलग न होकर एक हैं, यह वृत्ति मनुष्योंमें उत्पन्न करनेके लिए हमें क्या करना चाहिये ? विचारकोंका कथन है कि समाजमें ऊपरसे भिन्नता चाहे जितनी हो, पर यदि उनकी श्रद्धाका उपास्य देव एक ही है, तो विशालसे विशाल समाजको भी आसानीसे संगठित किया जा सकता है। अब यह श्रद्धाका केन्द्र क्या हो ? क्या कोई नई घोषणा करके किसी नए श्रद्धाके केन्द्रका निर्माण किया

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जाए ? कुछ लोग ऐसा करते हैं, पर ऐसे केन्द्र टिकाऊ नहीं होते, क्योंकि उनका समाजके रक्तमें मिश्रणमें नहीं हो पाता। कुछ थोडे लोगोंके दिलमें वह श्रद्धा स्थान घर कर भी जाए तो वह वह एक नये सम्प्रदाय या दलका रूप ले लेता है। इस प्रकार एकता होनेके स्थान पर अनेकता पैदा हो जाती है। इसलिए श्रद्धा पीढी दर पीढीके रक्तमें अच्छी तरह मिल गया हो ऐसा कोई श्रद्धाका स्थान है या नहीं इसका विचार करना चाहिये। और उस श्रद्धाको जागृत करना चाहिये। इस दृष्टिसे संघने कौनसा विचार किया ? संघने कभी भी समझमें कठिनतासे आनेवाले कोई सूक्ष्म विचार लोगोंके सामने नहीं रखा। ब्रह्म, सत्य धर्म आदि श्रद्धाके केन्द्र बन सकते हैं, पर उनका सामान्य मनुष्यकी समझमें आना जरा कठिन है। इसलिए सडक पर भीख मांगनेवाले तथा खेती करनेवालेकी समझमें भी आ जाए ऐसा कोई श्रद्धाका केन्द्र बनाना चाहिये।

संघका कथन है कि ऐसी श्रद्धावस्तु है। जिसके आधार पर हम अन्न और पानी प्राप्त करते हैं, जिसके आधार पर हमारे समाजके हजारों पीढियोंने सुख और वैभवका उपभोग किया। उत्तम जीवन हो इसलिए अपने समाजने पराक्रम किया। साम्राज्योंका स्थापन किया। आगे जानेके लिए मार्ग बनाया। उस मार्गका, उपासना पद्धतिका, सर्वदा ध्यान रहे इसलिए देशके प्रत्येक कोनेमें पवित्र स्थानोंका निर्माण किया, और यह सब जिस मातृभूमिके आधार किया उसी मातृभूमिको श्रद्धाका विषय मानकर प्रत्येक संघको कार्य करना चाहिये।

अपनी इस मातृभूमिका स्वरूप कितना भव्य है, कितना उदात्त है, इस बातकी प्रत्येक समाजको हमेशा जानकारी रहे ऐसी व्यवस्था अपने पूर्वजोंने कर रखी है। तीर्थयात्राके धामोंका अर्थ है, मातृभूमिकी पूरी प्रदक्षिणा। इन धामोंकी यात्रा करनेसे जान पडता है कि अपनी मातृभूमि कितनी विस्तृत है, वन्दनीय है और आदरणीय है। उत्तर प्रदेशमें एक बार किसी कार्यकर्तासे मैंने पूछा कि अपनी मातृभूमि कितनी बडी है, यह बात अशिक्षितोंको बतानेके लिए तुम क्या करते हो ? उत्तर मिला कि रामचरितमानसके आधार पर रामायणका पाठ करते हुए अयोध्यासे लंका पर्यंत तक वर्णन करके हम उन्हें यह बात समझाते हैं। भागवत पाठसे श्रीकृष्ण और पाण्डवोंके चरित्रसे घटनायें सुनाकर उन महापुरुषोंके विषयमें समाजोंमें जो भक्ति है उनका आधार लेकर मातृभूमिके विषयमें हम उनमें श्रद्धा उत्पन्न करते हैं। निश्चयसे कितनी सुन्दर कल्पना है।

इससे एक दूसरा विचार भी उत्पन्न होता है। यदि यह मातृभूमि हमारी श्रद्धाकी देवी है, तो क्या हम उसका अपमान सहन कर सकेंगे ? घरमें हम अपनी मूर्तिकी पूजा करते हैं, यदि कोई उस पर आघात करे अथवा तोडफोड करे तो क्या हम उसे सहन कर सकेंगे ? यदि करते हैं, तो इसका अर्थ है कि हमारी भक्तिमें कमी है। श्रद्धाके रक्षणके लिए आवश्यक पौरुषकी तथा कष्ट सहन करनेकी शक्तिका अभाव है। ' मेरे भाग्यमें ही मूर्तिकी पूजा करना नहीं लिखा है ' यह कहना बिलकुल फिजूल है, और स्वयंको धोखा देना है।

मातृभूमिकी भक्तिके दो प्रकार हैं, प्रथम उसके धूलको माथे पर लेना और दूसरा मातृभूमिकी चिन्तामें तल्लीन रहना, और यदि कोई मातृभूमिके बारेमें कुछ अपशब्द कहे, तो उसको ऐसा पाठ पढाना कि वह फिर दुबारा ऐसा न कहे। कोई मातृभूमिका विभाग करे तो बैचेन रहना, और आक्रामकको जब तक उसकी उद्दण्डताका योग्य मूल्य चुका न दिया जाए तब तक शान्तिसे न बैठना, आक्रामकको दण्डित करनेके लिए वातावरणका निर्माण करना, और उसके लिए मार्गमें आनेवाली आपत्तियोंको भी हंसकर सहन करना, यह ही वास्तविक भक्ति है।

मातृभूमिकी यही भक्ति वास्तविक है। इन दोनों प्रकारकी भक्तिकी आज अत्यन्त आवश्यकता है।

इस श्रद्धाके आधार पर समाजको एकत्र करना आसान होगा। इस श्रद्धाके न होनेके कारण लोग जाति तथा भाषाके नाम पर आपसमें लडते हैं। विदेशी आपत्तिके आनेपर भी ये आपसमें झगडना नहीं छोडते। पुराने ग्रंथोंमें एक दृष्टान्त है कि सांपके मुंहमें पडा हुआ भी मेंढक सामने उडनेवाले कीडेको पकडना चाहता है। हमारा समाज भी आज वैसा ही हो गया है। हजारों वर्षोंसे समाज पर संकट आते रहे हैं, समाज छिन्न भिन्न हो गया है, दीन और दरिद्र हो गया है, पर फिर भी स्वार्थके लिए स्वतंत्र दलोंको पैदा करना और उसका उपयोग अपने स्वार्थके लिए ज्यादासे ज्यादा करना आज भी चालू है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पर इसका कारण क्या है ? केवल यही कि उनके अंदर अपनी मातृभूमिके प्रति उत्कट श्रद्धाका अभाव है। उनका पुत्र रूप यह समाज एक परिवार है, अपना भी कोई कुछ का आचार है, उसकी भी अपनी एक परम्परा है और छोटे मोटे भेद होने पर भी मूल एक है, इसका ज्ञान ही नष्ट गया है। इस कारण ही यह दुःखद स्थिति हो गई है, इसलिए व्यक्तिके हृदयमें जागरण पैदा करना संघटित जीवनके लिए आवश्यक है। प्रत्येक भारतवासीके अन्तःकरणमें उतरकर उनके मनमें सोई हुई श्रद्धाको जगाना आवश्यक है। यह स्थिति २-४ वर्षोंके बाद नहीं, अपितु शीघ्रातिशीघ्र लानेकी आवश्यकता है।

इस प्रकार जिस समाजकी अन्तर्बाह्य एक रूपता है, आन्तरिक अर्थात् गुण, धर्म, श्रद्धा, तत्त्वज्ञान आदिकी एक रूपता और बाह्य अर्थात् समान शत्रु मित्र भाव, समान सुखदुःख, समान हानिलाभ, उस समाजको राष्ट्र कहते हैं। इस दृष्टिसे अपना राष्ट्र है। इस प्रकारका ज्ञान मातृभूतिके प्रति उत्पन्न श्रद्धासे ही हो सकता है। इसलिए इस भक्तिका साक्षात्कार प्रत्येक भारतवासीको कराना ही अपना संकल्प है। इस राष्ट्रके लिए सर्वस्व देनेकी वृत्तिको प्रत्येक व्यक्तिमें जागृत करना ही हमारा उद्देश्य है। प्रत्येक व्यक्तिमें इस प्रकारकी उत्कृष्ट राष्ट्र भावनाको जागृत करके उसके आधार पर कार्य करना है। और उसी आधार पर समाजका जीवन निर्माण सम्भव है।

अपने कार्यके स्वरूपको इस प्रकार निर्धारित करनेके बाद हमें अपने विषयमें भी विचार करना चाहिये, कि क्या मातृभूमिके स्मरण मात्रसे ही उसके प्रति हमारे अन्तःकरणमें श्रद्धा जागृत होती है ? विदेशियोंके अधिकारमें अपने भूभागके चले जाने पर अन्तःकरण व्यथित होता है ? शत्रुकी आज भी चल रही उद्दण्ड वृत्तिके कारण व्यथा होती है ? और मातृभूमिकी ऐसी अवस्था होनेपर भी हम आरामसे रहें, क्या यह हमें अच्छा प्रतीत होता है ?

अन्तःकरणमें श्रेष्ठ भावनाके एक बार जागृत हो जानेपर दूसरी बातें नीरस लगने लगती हैं। लोकमान्य तिलक एक बार एक गानेके कार्यक्रममें गए। गायन शुरु हुआ। पर अन्तिम समय भी तिलक उसी प्रकार स्थिर बैठे रहे, तब उस गायकने सोचा कि शायद लोकमान्यको मेरा गाना अच्छा नहीं लगा। बादमें उसने लोकमान्यसे पूछा, तो उत्तर मिला कि ' तू गाता सुन्दर है पर भगवान्के गान (भगवद्गीता) को सुनकर मेरे कान तृप्त हो गए हैं, इस कारण तेरा गाना मैं सुन ही नहीं सका। '

उत्कट भक्तिके होनेपर दूसरी बातें अच्छी नहीं लगतीं। इस दृष्टिसे हम अपने अन्तःकरणोंको टटोल कर देखें, जीवन देखें, कि हम जिस भक्तिका उपदेश दूसरोंको देनेके लिए जाते हैं, क्या वह भक्ति हमारे पास भी है ? यदि हम केवल दिखानेके लिए ही ऐसा करें तो वह दिखाना कितने दिन तक टिकेगा। इसलिए पहले स्वयंको टटोलकर देखना चाहिए।

दूसरे अनेक बडे लोग मुंहसे एक बात कहते हैं, पर व्यवहार उलटा करते हैं। उदाहरणके लिए वे जातीय वादको बुरा बताते हैं, पर चुनावके समय वे ही ' यह हरिजन है ' ' यह महाराष्ट्रीय है ' यह प्रचार करते हैं। पर इन सबको समाप्त करके अपने समाजका एक परिवारपन एक राष्ट्रत्व लोगोंके हृदयमें लाना चाहिए। यही हमारा उद्देश है।

दैवत-संहिता

१	अग्नि देवता मंत्रसंग्रह	मूल्य ६)	डा. व्य. १)
२	इंद्र देवता मंत्रसंग्रह	७)	१)
३	सोम देवता मंत्रसंग्रह	३)	॥)
४	उषा देवता (अर्थ तथा स्पष्टीकरणके साथ)	४)	१)
५	पवमान सूक्तम् (मूल मात्र)	॥)	=)

मन्त्री— स्वाध्याय-मण्डल, पोस्ट- 'स्वाध्यायमण्डल (पारडी)' पारडी [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भारत और अरबके सम्बन्ध

(लेखक— श्री डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी)

[कलकत्ता विश्वविद्यालयके प्राध्यापक डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी एक विख्यात भाषा-विज्ञान-शास्त्रज्ञ तथा इतिहासज्ञ हैं। इनके अनेक अन्वेषणात्मक लेख विभिन्न पत्रिकाओंमें प्रकाशित हो चुके हैं। तिब्बत और चीनी संस्कृति पर उनके अनुसंधानात्मक कार्योंकी विश्वके चोटीके विद्वानोंने मुक्त कण्ठसे सराहना की। सम्प्रति वे पश्चिमी बंगाल विधान-सभाके अध्यक्ष भी हैं। 'अल अरब' में प्रकाशित उनके लेखका संक्षिप्त रूपान्तर प्रस्तुत किया जा रहा है]

सोवियत रूसके भागोंको छोडकर शेष एशियाको सांस्कृतिक दृष्टिसे तीन भागोंमें बांटा जा सकता है। मध्यमें भारत, पूर्वमें चीन (इसमें कोरिया, जापान और वियतनाम भी सम्मिलित है) और पश्चिममें अरब; इस्लामके द्वारा टर्की, ईरान, पाकिस्तान, मलाया, इण्डोनेशिया तथा कुछ भारतका हिस्सा भी अरब संस्कृतिसे सम्बन्धित है। इन तीन भागोंमें तीन विभिन्न संस्कृतियां उत्पन्न हुई। इन संस्कृतियोंका प्रभाव एशियाके एक बहुत बडे हिस्से पर है। बौद्ध धर्म, भारतीय विचार, भारतीय विज्ञान, कला तथा शिल्पके द्वारा चीनी संस्कृतिका भारतीय संस्कृतिसे प्रभावित होना स्पष्ट है। इसके साथ ही चीनी संस्कृतिने भी कुछ अंश तक भारतीय संस्कृतिको भी प्रभावित किया पर यह अभी खोजका विषय है। अरब इस्लाम भी विशेषकर भारतीय विचारोंसे और विज्ञानसे प्रभावित था। इसी प्रकार अरबने भी इस्लामके द्वारा गत १००० वर्षोंसे भारतीय विशेषकर उत्तर भारतीय आचार विचारको काफी प्रभावित किया है और भारतीय सभ्यतामें नये नये तत्वोंको जोडा भी है।

भौगोलिक स्थिति।

भौगोलिक दृष्टिसे अरब और भारत दोनों नितान्त भिन्न और स्वयंमें इकाई हैं। उनकी भौतिक स्थितिमें समानताकी अपेक्षा भिन्नता अधिक है। भारत विभिन्न जल वायुओंवाला देश है, यह वस्तुतः एक देश न होकर एक द्वीप है। पर अरब अपने मरुस्थल, ऊसर पर्वत तथा गहरी-गहरी नदियोंकी घाटियोंके साथ एक ही जल वायुवाला देश है, वर्षभरमें थोडे समयके लिए थोडीसी वर्षा हो जाती है और तब थोडी बहुत हरियाली हो जाती है। अरबमें खजूरके वृक्षोंकी बहुतायत है और दक्षिणी तथा पश्चिमी अरबके समुद्री किनारोंके प्रदेशोंको छोडकर शेष प्रदेश हरियालीसे रहित हैं। कुछ सुगंधित पदार्थोंके पौधे अरबमें उगते हैं और विभिन्न सुगंधित पदार्थ ही अरबकी खास निर्यात है।

भारतमें ऊंची सभ्यताके विकसित होनेका कारण यहांकी जलवायुकी रंगीनता ही है और इस सभ्यताको बनानेमें एकसे अधिक और कमसे कम चार जातियोंने भाग लिया है। इन जातियोंकी संस्कृति तथा आर्योंकी और उनकी भाषा संस्कृतकी योग्यतासे इतनी ऊंची सभ्यता विकसित हुई, जिसने सभी पृथक् पृथक् जातियोंको बांध दिया। अरबमें जेषता एक प्रकारकी है। इनका सम्बन्ध श्वेत जाति (White-race) की एक शाखासे है। ईरानी भाषासे सम्बन्ध रखनेवाले (Semetic) अरबोंकी दो शाखायें हैं,— एक तो उत्तरीय और मध्य अरब, दूसरी दक्षिणी अरब जिन्हें हिम्यारिट्स (Himyarites) या साबीन (Saabean) भी कहा जाता है। अरबोंका प्रारम्भिक जीवन भ्रमण करनेवाले चरवाहों पर आधारित था अपने भेडों, ऊंटों और घोडोंके झुण्डके साथ-साथ अरब एक स्थानसे दूसरे स्थान पर घूमते थे, और उन्होंने अपनी इसी भ्रमणकारी संस्कृतिको विकसित किया यह संस्कृति उनके प्राचीन कालके लिए कोई महान् विचार नहीं दे सकी। चूंकि उनके देशमें उत्पादन शीलता नहीं थी, इसलिए दक्षिणी, पश्चिमी, उत्तरी तथा अरबकी खाडीके आसपास

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रहनेवाले अरबोंने व्यापारको बढाया और वाणिज्य द्रव्योंको एक देशसे दूसरे देशमें ले जानेके व्यपारमें कुशलता हासिल कर ली। सब कालोंमें यह व्यपार ही उनके आर्थिक जीवनका एक मुख्य साधन रहा। विभिन्न देशोंमें व्यापार करनेवाले दूसरे व्यापारियोंके समान अरबियोंने भी बहुत जल्दी ही अपनी संस्कृतिको दूसरी संस्कृतियोंमें मिलानेकी तथा साहसिक काम करनेकी शक्ति प्राप्त कर ली। यह शक्तियां उनके जीवनकी बहुत बडी जायदाद हैं।

इस प्रकार अरब देशवासियोंका सम्बन्ध मेसोपोटामिया घाटीके अत्यन्त सभ्य देशोंसे भी हुआ। जहांसे प्राचीन सुमेरियन लोगोंने एक ऊंची और नई सभ्यताका प्रसार किया था। बादमें इन सुमेरियन लोगोंकी सभ्यता भी 'अक्कादियन' (Akkadians) कहे जानेवाले अरब और सीरियाके लोगोंकी सभ्यतासे प्रभावित हुई, अन्तमें इन अक्कादियन लोगोंने मेसोपोटामियाके सुमेरियन लोगोंकी संस्कृति और धर्मको अपना कर तथा उन सुमेरियन पर अपनी भाषा थोपकर उन्हें अपने अन्दर मिला लिया। येही अक्कादियन प्राचीन बेबीलोनियन हो गए इनकी भाषा अरबीसे तथा धर्म और संस्कति सुमेरियन लोगोंसे मिलती जुलती थी। बादमें अरब भी इन बेबीलोनियनसे पेलेस्टाइनके यहूदियोंसे तथा दक्षिणी अरबियन या हिम्यारिट्ससे प्रभावित हुआ। लाल सागरके किनारे बसे हुए तथा उत्तरमें अरबसे लगे हुए मिश्रने भी कुछ अंश तक अरब पर प्रभाव डाला। ईसासे प्रथम एक हजार वर्ष पूर्व तक दक्षिणी अरेबियनोंका समुद्री व्यापारके रूपमें दक्षिण भारतसे सम्बन्ध बना रहा। इस प्रकार सबसे पहले समुद्री मार्गसे भारत और अरबका सम्बन्ध हुआ।

भारतीय विचारकोंकी पश्चिमी देशोंमें यात्रा

ईसासे कुछ समय पूर्व तक भारतीय सभ्यता एक निश्चित रूप लेती रही, और ईसासे ५०० वर्ष पूर्व प्रथम बार भारतीय विचारकोंने पश्चिमी देशोंकी यात्रा की और ईरानसे होकर यूनानमें ये विचार फैले। पर प्राचीन अरब तब तक अपने देशमें ही संकुचित थे इन विचारोंके सम्पर्कमें नहीं आए। बाद भारतीय वाणिज्य द्रव्योंका भी पश्चिमी देशोंमें निर्यात शुरु हुआ, और अरब लोगोंने भी भारतसे बहुत सा द्रव्य खरीदा। पवित्र कुरानमें कुछ शब्द ऐसे आते हैं जो इस बातके द्योतक हैं कि प्राचीन कालमें अरब भारतसे वाणिज्य द्रव्योंको प्राप्त करते थे। फलोंमें नारियल, तरकारियोंमें बैंगन, मसालोंमें अदरख, भारतीय लोहा या इस्पात, जिसको पूर्व इस्लाम तथा बादके इस्लाम के लोग बडे महत्वकी दृष्टिसे देखते थे (यह लोहा अरबमें 'मुहानिदा' कहा जाता था, जिसका अर्थ है हिन्द या भारतका सामान) तथा दूसरी विभिन्न औषधियें (जैसे कपूर) आदि वस्तु अरब भारतसे लेते थे। पर भारतीय विचारोंका प्रसार अभी उन अरबोंमें नहीं हो पाया था, क्योंकि बौद्धिक दृष्टिसे वे कमजोर थे। पैगम्बरके इस्लाम स्थापनाके पूर्वका सारा समय अरबके इतिहासमें 'जाहिलिया' (अज्ञानताका युग) कहा जाता है, जो यह दिखाता है कि इस्लामकी स्थापनाके बादके मनुष्योंकी तुलनामें इस्लामके पूर्वके लोग अविकसित थे। पर बेबीलोनिया सीरिया और यूनानकी संस्कृतिके निकट आनेके कारण अरबके उत्तरीय भागके निवासियोंने अपनी संस्कृति बनाई और सीरियाकी सीमासे लगे हुए उत्तरी अरबके पालमिरा (Palmyra) नामक शहरमें राज्यकी स्थापनाकी और दो अरब सम्राट, सम्राट उदयन (Udhayn) और उसकी रानी जैनब (Zaynab) जो कि यूनानके इतिहासमें ऑडेनथस (Odenathos) और सेनोबिया (Senobia) के नामसे प्रसिद्ध हुए, रोमके साम्राज्यमें बुद्धिमान् शासक रूपमें विख्यात हुए।

इस्लाम, सूफीज्म और वेदान्त

इस्लामकी रचना सेमेटिक अरबोंके दिमागकी थी इसके आधारमें यहूदियोंका बडा प्रभाव था। इस्लामके एकेश्वरवादका सिद्धान्त उन्हें हिब्रू लोगोंसे प्राप्त हुआ था, क्योंकि यह एकेश्वरवादका सिद्धान्त प्राचीन सेमेटिक लोगोंमें नहीं था। प्रारम्भके सेमेटिक अनेकेश्वरवादी थे। कौरानिक इस्लाम पर पैगम्बर मुहम्मदके व्यक्तित्वकी छाप है। इस्लामने संकुचित मनोवृत्तियोंसे युक्त रूढिवादियोंका, एक ईश्वर विषयक श्रद्धाका, (जो ईश्वर ईर्ष्यालु, बडे बडे कामोंको करनेवाला तथा अन्तिम निर्णायक है) सर्वत्र प्रचार किया। पर पैगम्बरके मरनेके सौ वर्ष बाद ही इस्लाम, जो वस्तुतः अरबमें सुधार आन्दोलनके रूपमें शुरु हुआ था, रहस्यवाद और यौगिक क्रियाओंकी (Mysticism and mystic

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

experience) तरफ मुड गया। इसने इस धर्मको, जो एक ईश्वरमें ही श्रद्धा रखने तथा ईश्वरके कथानानुसार (जिस प्रकार पैगम्बरने कुरानमें कहा है) उत्तम जीवन-को बितानेका ही सब देशोंको उपदेश देता था, एक नई दिशामें मोड दिया। पर इस रहस्यवादने इस्लाममें प्रवेश करके इस्लामको और अधिक समृद्ध ही बनाया। इस्लामिक रहस्यवाद, तसाव्वुफ या सूफीज्म दूसरे प्रकारके विचारोंसे प्रभावित होकर विकसित हुआ। इस विचार धाराने मुस्लिम मस्तिष्कको तथा उनके आध्यात्मिक प्रेरणाओं पर प्रभाव डालना शुरु कर दिया। यूनानियोंके आध्यात्मिक-ज्ञानके विचारोंको सूफियोंने अपना लिया, विशेषकर मिश्रके धुन-न-नून (Dhun-n-nun) आदि सूफियोंने। यह विचार अरबमें 'मरिफत' के नामसे फैला। इसीके पीछे एक और सिद्धान्त फैला, जो भारतीय वेदान्तके निर्वाण या मोक्ष (जिसमें जीवात्माका ब्रह्ममें मिल जाना बताया है) के समान था, इस सिद्धान्तका अरबमें फन-फि-ल्लाह (Fana-fi-llah) के नामसे प्रचार हुआ। ईसाके बाद दसवीं शताब्दीके प्रथम दो दशकमें एक सूफी सन्त 'मन्सूर अल हल्लाज' जो ईरानमें जन्मा और ईराकमें आकर बस गया था, भारतीय रहस्यवादकी शिक्षा लेने भारत आया। और ईराक (बगदाद) लौटकर उसने अरब-इस्लामके सामने 'अन-ल-हक्क अर्थात् मैं सत्य हूं का सिद्धान्त रखा और उसने जीव ब्रह्मकी एकताके सिद्धान्तका वहां प्रचार किया। यह भारतीय वेदान्त था, जिसे उसने भारतमें सीखा था। अन-उ-हक्कका भाव वही है जिसे उपनिषदोंमें 'अहं ब्रह्मास्मि' (मैं ब्रह्म हूं) के द्वारा बताया है।

दो महासागरोंका मिलन

यह सिद्धान्त ईरान रूढीवादी मुस्लिमोंके समझमें नहीं आया और जीव ब्रह्मकी एकताका सिद्धान्त उन्हें ईश्वरकी निन्दा करनेवाला प्रतीत हुआ। अतः रूढिवादी मुल्लाओंने मन्सूर-अल-हल्लाज पर इस्लामके विरुद्ध सिद्धान्तोंका प्रचार करनेके दोषमें अभियोग चलाया। यह अभियोग दो वर्ष तक चला और अन्तमें मन्सूरको ईश्वरकी निन्दा करनेके दोषमें मृत्युदण्ड दिया गया। यद्यपि मन्सूरको मार दिया गया, पर उसके विचारोंने इस्लाम तथा रहस्यवादको समृद्ध बना दिया। और बादमें सूफीज्मको जो नास्तिक और कुरान-विरुद्ध माना जाता था, इस्लामिक दार्शनिक अल-गजालीने इस्लामके साथ ही स्थापित किया। बादके सूफियोंने कई भारतीय विचारोंको भी अपना लिया था। स्पेनमें पैदा होनेवाले इब्न-अल-अरबी नामक एक सूफीने, जो इतिहासमें एक महान् रहस्यवादी तथा कविके नामसे प्रसिद्ध है, दमिश्कमें एक दूसरे सूफीको 'अमृत-कुण्ड' नामक एक संस्कृतके ग्रन्थके अरबीमें अनुवाद करनेमें सहायता दी। कुछ निश्चित यौगिक क्रियाओंके तथा शरीरमें ६ आध्यात्मिक शक्तिके केन्द्रोंके सिद्धान्तको भी (जिन्हें संस्कृतमें षट्चक्र और अरबीमें मनजिल कहते हैं) सूफीज्ममें ज्योंका त्यों ले लिया गया।

परमात्मा, जीवात्मा और मनुष्यके कर्त्तव्य विषयक वेदान्त और सूफीज्मकी मान्यतायें बहुत कुछ समान हैं। भारतीय और इस्लामके इन ऊंचे विचारोंके संम्मिलनको काव्यकी भाषामें 'दो महासागरोंका मिलन' 'मजमा अल बहरैन' कहा है। इस 'समुद्र संगम' की भावनाको १७ वीं शताब्दीमें होनेवाले, शाहजहांके ज्येष्ठ पुत्र दाराशिकोहने अपने शब्दोंमें प्रयुक्त किया है।

अरब विज्ञान पर भारतका प्रभाव

आध्यात्मिक विचारोंके अतिरिक्त अरब विज्ञान पर भी भारतने काफी प्रभाव डाला है। अंकगणितमें शून्य और दशमलवके सिद्धान्तको अरबने भारतसे ही लिया है। गणितमें ये दोनों हमारी प्रगतिके चिन्ह हैं। और अरबोंने इसको योरोपको दिया। भारतसे प्राप्त दशमलव पर आधारित अंकोंको अरब लोग 'रकम अल-हिन्द' (भारतीय अंक) कहते हैं। इसको योरोपने अरबोंसे प्राप्त किया। पर चूंकि योरोप निवासियोंने इसे सीधे अरबोंसे लिया और इसकी वास्तविक उत्पत्ति स्थानको वे नहीं जानते इसलिए इस संख्याको वे 'अरबी संख्या' कहते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यज्ञोंका स्वास्थ्य पर प्रभाव।

लेखक— श्री दुर्गाशङ्कर त्रिवेदी, पीपलखेड़ा, जि. धार (म. प्र.)

★

यज्ञ हमारे मेधावी ऋषि महर्षियों द्वारा धरोहरके रूपमें प्राप्त एक प्रकारकी वैज्ञानिक प्रक्रिया है। जो वैज्ञानिक-प्रक्रिया जितनी सूक्ष्म होगी, वह उतनी ही अधिक लाभदायक हो सकती है। तिसपर भी विश्वमें निरन्तर फैलनेवाले दूषित वायु मण्डलको शुद्ध और सात्विक बनानेके लिये यज्ञ ही एक आवश्यक कृत्य है। इसे हम यदि धार्मिक या कर्मकाण्डिक दृष्टि कोणसे न भी स्वीकार करें तो भी स्वास्थ्य विज्ञान और कृमि विनाशक औषधियोंके हवन करण द्वारा प्राप्त शुद्ध वायु करणको हम सभीको मानना ही पड़ेगा। तभी हमारे मेधावी महर्षियोंने अथर्व वेदमें वन्दनाके स्वरोंमें कहा है—

आमे सुपक्वे शबले विपक्वे,
यो मा पिशाचो अशने ददम्भ।
तदात्मना प्रजया पिशाचा,
वियातयन्तामगदोऽयमस्तु॥
क्षीरे मा मन्थे यतमो ददम्भ,
अकृष्टपच्ये अशने धान्ये यः०॥
अपां मा पाने यतमो ददम्भ,
क्रव्याद् यातूनां शयने शयानम्०॥
दिवा मा नक्तं यतमो ददम्भ,
क्रव्याद् यातूनां शयने शयानम्।
तदात्मना प्रजया पिशाचा,
वियातयन्तामगदोऽयमस्तु॥

(अथर्ववेद ५।२९।६-९)

'(कच्चे, पक्के, अधपके या तले हुए भोजनमें प्रविष्ट होकर जिन मांस भक्षक रोग कृमियोंने इस मनुष्यको हानि पहुंचाई है, वे सब रोग कृमि ये यज्ञाग्ने! तेरे द्वारा सन्तति सहित विनष्ट हो जायें, जिससे कि यह निरोग हो। दूधमें, मठेमें, बिना खेतीके पैदा हुए जंगली धान्यमें, कृषि जन्य धान्यमें, पानीमें, बिस्तरपर सोते हुए, दिनमें या या रातमें जिन रोग कृमियोंने इसे हानि पहुँचाई है वे सब हे यज्ञाग्ने! तेरे द्वारा सन्तति सहित विनष्ट हो जायें, जिससे कि यह हमारा साथी निरोग हो।)'

इदं हविर्यातुधानान् नदी फेनमिवावहत्।
य इदं स्त्री पुमानकः इह स स्तुवतां जनः॥
यत्रैषामग्ने जनिमानि वेत्थ गुहा सता-
मत्रिणां जातवेदः।
तांस्त्वं ब्रह्मणा वावृधानो जह्येषां शततर्हमग्ने॥

अथर्ववेद १।८।१,४

अग्निमें डालीहुई आहुतियाँ रोग कृमियोंको उसी प्रकार बहा ले जाती है जिस प्रकार नदी पानीके झागोंको। जो कोई स्त्री या पुरुष इस यज्ञको करे उसे चाहिये कि वह हवि डालनेके साथ मन्त्रोच्चारण द्वारा अग्निका स्तवन भी करे।

हे प्रकाशक अग्ने! गुप्त स्थानोंमें छिपे हुए भक्षक, रोग कृमियोंके जन्मोंका तू जानता है। वेद मंत्रोंके साथ बढता हुआ तू उन रोग-कृमियोंको सैंकडों वधोंका पात्र बना।

आजके भौतिक विज्ञानने यह सिद्ध कर दिया है कि घी और सुगंधित द्रव्यके हवनसे धुएंके अणु फैलते हैं। उनमें निगेटिव चार्जके विद्युत प्रवेश कर जाते हैं।

न तं यक्ष्मा अरुन्धते नैनं शपथो अश्नुते।
यं भेषजस्य गुल्गुलोः सुरभिर्गन्धो अश्नुते॥

(जिस मनुष्यको गूगल औषधिकी उत्तम गंध प्राप्त होती है उसे रोग पीडित नहीं करते और अभिशाप या आक्रोश उसे नहीं घेरता।)

इस प्रकार यज्ञोंके माध्यमसे रोगनिवारणोंका वर्णन हमारे शास्त्रकारोंकी कोरी कल्पना ही नहीं है। उनके पीछे कई सूक्ष्म तत्व छिपे हुए हैं। वैदिक एवं अन्य कालोंमें रोग फैलनेके समयोंमें बडे बडे यज्ञानुष्ठानोंका आयोजन किया जाता था, जिनसे जड चेतन जीव, आदि सभी आरोग्य लाभ किया करते थे। ऐसे यज्ञायोजनोंको शास्त्रोंमें 'भैषज्य यज्ञ' कहते हैं।

भैषज्ययज्ञा वा एते यच्चातुर्मास्यानि।
तस्माद् ऋतुसन्धिषु प्रयुज्यते॥
ऋतुसन्धिषु वै व्याधिर्जायते।

गो. ब्रा. ३०१-१९

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

experience) तरफ मुड गया । इसने इस धर्मको, जो एक ईश्वरमें ही श्रद्धा रखने तथा ईश्वरके कथनानुसार (जिस प्रकार पैगम्बरने कुरानमें कहा है) उत्तम जीवन-को बितानेका ही सब देशोंको उपदेश देता था, एक नई दिशामें मोड दिया । पर इस रहस्यवादने इस्लाममें प्रवेश करके इस्लामको और अधिक समृद्ध ही बनाया । इस्लामिक रहस्यवाद, तसाव्वुफ या सूफीज्म दूसरे प्रकारके विचारोंसे प्रभावित होकर विकसित हुआ । इस विचार धाराने मुस्लिम मस्तिष्कको तथा उनके आध्यात्मिक प्रेरणाओं पर प्रभाव डालना शुरु कर दिया । यूनानियोंके आध्यात्मिक-ज्ञानके विचारोंको सूफियोंने अपना लिया, विशेषकर मिश्रके धुन-न-नून (Dhun-n-nun) आदि सूफियोंने । यह विचार अरबमें ' मरिफत ' के नामसे फैला । इसीके पीछे एक और सिद्धान्त फैला, जो भारतीय वेदान्तके निर्वाण या मोक्ष (जिसमें जीवात्माका ब्रह्ममें मिल जाना बताया है) के समान था, इस सिद्धान्तका अरबमें फन-फि-ल्लाह (Fana-fi-llah) के नामसे प्रचार हुआ । ईसाके बाद दसवीं शताब्दीके प्रथम दो दशकमें एक सूफी सन्त ' मन्सूर अल हल्लाज ' जो ईरानमें जन्मा और ईराकमें आकर बस गया था, भारतीय रहस्यवादकी शिक्षा लेने भारत आया । और ईराक (बगदाद) लौटकर उसने अरब-इस्लामके सामने ' अन-ल-हक्क अर्थात् मैं सत्य हूं का सिद्धान्त रखा और उसने जीव ब्रह्मकी एकताके सिद्धान्तका वहां प्रचार किया । यह भारतीय वेदान्त था, जिसे उसने भारतमें सीखा था । अन-ल-हक्कका भाव वही है जिसे उपनिषदोंमें ' अहं ब्रह्मास्मि ' (मैं ब्रह्म हूं) के द्वारा बताया है ।

दो महासागरोंका मिलन

यह सिद्धान्त ईरान रूढीवादी मुस्लिमोंके समझमें नहीं आया और जीव ब्रह्मकी एकताका सिद्धान्त उन्हें ईश्वरकी निन्दा करनेवाला प्रतीत हुआ । अतः रूढिवादी मुल्लाओंने मन्सूर-अल-हल्लाज पर इस्लामके विरुद्ध सिद्धान्तोंका प्रचार करनेके दोषमें अभियोग चलाया । यह अभियोग दो वर्ष तक चला और अन्तमें मन्सूरको ईश्वरकी निन्दा करनेके दोषमें मृत्युदण्ड दिया गया । यद्यपि मन्सूरको मार दिया गया, पर उसके विचारोंने इस्लाम तथा रहस्यवादको समृद्ध बना दिया। और बादमें सूफीज्मको जो नास्तिक और कुरान-विरुद्ध माना जाता था, इस्लामिक दार्शनिक अल-गज्जालीने इस्लामके साथ ही स्थापित किया । बादके सूफियोंने कई भारतीय विचारोंको भी अपना लिया था । स्पेनमें पैदा होनेवाले इब्न-अल-अरबी नामक एक सूफीने, जो इतिहासमें एक महान् रहस्यवादी तथा कविके नामसे प्रसिद्ध है, दमिश्कमें एक दूसरे सूफीको ' अमृत-कुण्ड ' नामक एक संस्कृतके ग्रन्थके अरबीमें अनुवाद करनेमें सहायता दी । कुछ निश्चित यौगिक क्रियाओंके तथा शरीरमें ६ आध्यात्मिक शक्तिके केन्द्रोंके सिद्धान्तको भी (जिन्हें संस्कृतमें षट्चक्र और अरबीमें मनजिल कहते हैं) सूफीज्ममें ज्योंका त्यों ले लिया गया ।

परमात्मा, जीवात्मा और मनुष्यके कर्त्तव्य विषयक वेदान्त और सूफीज्मकी मान्यतायें बहुत कुछ समान हैं । भारतीय और इस्लामके इन ऊंचे विचारोंके संमिलनको काव्य-की भाषामें ' दो महासागरोंका मिलन ' ' मजमा उल बहरैन ' कहा है । इस ' समुद्र संगम ' की भावनाको १७ वीं शताब्दीमें होनेवाले, शाहजहांके ज्येष्ठ पुत्र दारा-शिकोहने अपने शब्दोंमें प्रयुक्त किया है ।

अरब विज्ञान पर भारतका प्रभाव

आध्यात्मिक विचारोंके अतिरिक्त अरब विज्ञान पर भी भारतने काफी प्रभाव डाला है । अंकगणितमें शून्य और दशमलवके सिद्धान्तको अरबने भारतसे ही लिया है । गणितमें ये दोनों हमारी प्रगतिके चिन्ह हैं । और अरबोंने इसको योरोपको दिया । भारतसे प्राप्त दशमलव पर आधारित अंकोंको अरब लोग ' रकम अल-हिन्द ' (भारतीय अंक) कहते हैं । इसको योरोपने अरबोंसे प्राप्त किया । पर चूंकि योरोप निवासियोंने इसे सीधे अरबोंसे लिया और इसकी वास्तविक उत्पत्ति स्थानको वे नहीं जानते इसलिए इस संख्याको वे ' अरबी संख्या ' कहते हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यज्ञोंका स्वास्थ्य पर प्रभाव ।

लेखक— श्री दुर्गाशङ्कर त्रिवेदी, पीपलखेडा, जि. धार (म. प्र.)

★

यज्ञ हमारे मेधावी ऋषि महर्षियों द्वारा धरोहरके रूपमें प्राप्त एक प्रकारकी वैज्ञानिक प्रक्रिया है । जो वैज्ञानिक-प्रक्रिया जितनी सूक्ष्म होगी, वह उतनी ही अधिक लाभदायक हो सकती है । तिसपर भी विश्वमें निरन्तर फैलनेवाले दूषित वायु मण्डलको शुद्ध और सात्विक बनानेके लिये यज्ञ ही एक आवश्यक कृत्य है । इसे हम यदि धार्मिक या कर्मकाण्डिक दृष्टि कोणसे न भी स्वीकार करें तो भी स्वास्थ्य विज्ञान और कृमि विनाशक औषधियोंके हवन करण द्वारा प्राप्त शुद्ध वायु करणको हम सभीको मानना ही पडेगा । तभी हमारे मेधावी महर्षियोंने अथर्व वेदमें वन्दनाके स्वरोंमें कहा है—

आमे सुपक्वे शबले विपक्वे,
यो मा पिशाचो अशने ददम्भ ।
तदात्मना प्रजया पिशाचा,
वियातयन्तामगदोऽयमस्तु ॥
क्षीरे मा मन्थे यतमो ददम्भ,
अकृष्टपच्ये अशने धान्ये यः० ॥
अपां मा पाने यतमो ददम्भ,
क्रव्याद् यातूनां शयने शयानम्० ॥
दिवा मा नक्तं यतमो ददम्भ,
क्रव्याद यातूनां शयने शयानम् ।
तदात्मना प्रजया पिशाचा,
वियातयन्तामगदोऽयमस्तु ॥

(अथर्ववेद ५।२९।६-९)

'(कच्चे, पक्के, अधपके या तले हुए भोजनमें प्रविष्ट होकर जिन मांस भक्षक रोग कृमियोंने इस मनुष्यको हानि पहुंचाई है, वे सब रोग कृमि ये यज्ञाग्ने ! तेरे द्वारा सन्तति सहित विनष्ट हो जायें, जिससे कि यह निरोग हो । दूधमें, मठेमें, बिना खेतीके पैदा हुए जंगली धान्यमें, कृषि जन्य धान्यमें, पानीमें, बिस्तरपर सोते हुए, दिनमें या या रातमें जिन रोग कृमियोंने इसे हानि पहुँचाई है वे सब हे यज्ञाग्ने ! तेरे द्वारा सन्तति सहित विनष्ट हो जायें, जिससे कि यह हमारा साथी निरोग हो ।)'

इदं हविर्यातुधानान् नदी फेनमिवावहत् ।
य इदं स्त्री पुमानकः इह स स्तुवतां जनः ॥
यत्रैषामग्ने जनिमानि वेत्थ गुहा सता-
मत्त्रिणां जातवेदः ।
ताँस्त्वं ब्रह्मणा वावृधानो जह्येषां शततर्हमग्ने ॥

अथर्ववेद १।८।१,४

अग्निमें डालीहुई आहुतियाँ रोग कृमियोंको उसी प्रकार बहा ले जाती है जिस प्रकार नदी पानीके झागोंको । जो कोई स्त्री या पुरुष इस यज्ञको करे उसे चाहिये कि वह हवि डालनेके साथ मन्त्रोच्चारण द्वारा अग्निका स्तवन भी करे ।

हे प्रकाशक अग्ने ! गुप्त स्थानोंमें छिपे हुए भक्षक, रोग कृमियोंके जन्मोंका तू जानता है । वेद मंत्रोंके साथ बढता हुआ तू उन रोग-कृमियोंको सैंकडों वधोंका पात्र बना ।

आजके भौतिक विज्ञानने यह सिद्ध कर दिया है कि घी और सुगंधित द्रव्यके हवनसे धुएंके अणु फैलते हैं । उनमें निगेटिव चार्जके विद्युत प्रवेश कर जाते हैं ।

न तं यक्ष्मा अरुन्धते नैनं शपथो अश्नुते ।
यं भेषजस्य गुल्गुलोः सुरभिर्गन्धो अश्नुते ॥

(जिस मनुष्यको गूगल औषधिकी उत्तम गंध प्राप्त होती है उसे रोग पीडित नहीं करते और अभिशाप या आक्रोश उसे नहीं घेरता ।)

इस प्रकार यज्ञोंके माध्यमसे रोगनिवारणोंका वर्णन हमारे शास्त्रकारोंकी कोरी कल्पना ही नहीं है । उनके पीछे कई सूक्ष्म तत्व छिपे हुए हैं । वैदिक एवं अन्य कालोंमें रोग फैलनेके समयोंमें बडे बडे यज्ञानुष्ठानोंका आयोजन किया जाता था, जिनसे जड चेतन जीव, आदि सभी आरोग्य लाभ किया करते थे । ऐसे यज्ञायोजनोंको शास्त्रोंमें 'भैषज्य यज्ञ' कहते हैं ।

भैषज्ययज्ञा वा एते यच्चातुर्मास्यानि ।
तस्माद् ऋतुसन्धिषु प्रयुज्यते ॥
ऋतुसन्धिषु वै व्याधिर्जायते ।

गो. ब्रा. ३०।१-१९

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(जो चातुर्मास्य यज्ञ हैं वे भैषज्य यज्ञ कहलाते हैं। क्योंकि वे रोगोंको दूर करनेके लिये होते हैं। ये ऋतु-सन्धियोंमें किये जाते हैं, क्योंकि ऋतु सन्धियोंमें ही रोग फैलते हैं।)

इसी प्रकार क्षय चिकित्सामें आधुनिक विज्ञान इतनी विवशता प्रकट कर रहा है उसीकी चिकित्साका वर्णन हमारे मेधावी महर्षियोंने अथर्व वेदमें उद्घोषित किया है।

मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनाय कमज्ञात
यक्ष्मादुत राजयक्ष्मात्। ग्राहि जग्राह यद्येतदेनं तस्या इन्द्राग्नी प्रमुमुक्तमेनम् ॥
अथर्व. ३।११।१

(हे व्याधि ग्रस्त ! तुझको सुखके साथ चिरकालतक जीनेके लिये गुप्त यक्ष्मारोग और सम्पूर्ण प्रकट राजयक्ष्मा रोगसे आहुति द्वारा छुडाता हूँ। जो इस समयमें इस प्राणीको पीडाने या पुराने रोगने ग्रहण किया है, उससे वायु तथा अग्नि देवता इसको अवश्य छुडावें।)

यदि क्षितायुर्यदि वा परेतो यदि मृत्योरन्तिकं
नीत एव। तमा हरामि निर्ऋतेरुपस्थादस्पार्शमेनंशत शारदाय ॥ अथर्व. ३।११।२

(यदि रोगके कारण न्यून आयुवाला हो, अथवा इस संसारके सुखोंसे दूर हो, चाहे मृत्यु निकट आ चुकी हो, ऐसे रोगीको भी महारोगके पाशसे छुडाता हूँ। इस रोगीको सौ शरद ऋतुओंतक जीनेके लिये प्रबल किया है।)

विद्म वै ते जायान्य जानं यतो जायान्य जायसे।
कथं ह तत्र त्वं हनो यस्य कृण्मो हविर्गृहे ॥
अथर्व. ७।७६।५

(हे क्षयरोग ! तेरे उत्पन्न होनेके विषयमें हम निश्चयसे जानते हैं कि तू जहांसे उत्पन्न होता है तू वहां किस प्रकार हानि कर सकता है। जिसके घरमें हम विद्वान् नाना औषधियोंसे रोग नाशक हवि या चरुको बनाकर उससे अग्नि होम करते हैं अर्थात् रोग नाशक हवि या अन्न द्वारा क्षय रोगको निकाल डालनेपर सब प्रकारसे क्षय रोग दूर हो जाता है।)

इसी प्रकार आयुर्वेदका भी यही मत है।

प्रयुक्त्या यथा चेष्ट्या राजयक्ष्मा पुरा जिता।
तां वेद विहितामिष्टमारोग्यार्थी प्रयोजयेत् ॥
चरक। चि. स्था. अ. ८।१२

(जिस यज्ञके प्रयोगसे प्राचीन कालमें राज यक्ष्मा रोग-नष्ट किया जाता था, आरोग्यता चाहनेवाले मनुष्यको उसी वेदविहित यज्ञका अनुष्ठान करना चाहिये।)

यह है हमारे भारतीय मनीषियोंके अनुभवोंके तथ्य, अब आइये कुछ पाश्चात्य तथा अन्य विचार धाराओंपर भी विचार करें—

कुछ प्रसिद्ध चिकित्साशास्त्रियोंके मत इस प्रकार हैं—

१. 'जलती हुई शक्करके धुयेंमें वायु शुद्ध करनेकी बडी शक्ति है। इससे हैजा, तपेदिक, चेचक, आदिका विष शीघ्र नष्ट हो जाता है।' प्रो. टिलवर्ट (फ्रांस)

२. घी, केसर, चावल मिलाकर जलानेसे प्लेगसे सुरक्षित रहना संभव है। डा. कर्नल किंग, आर. एम. एस.

३. 'सूखे फलोंके हवनसे टाइफाइडके कीटाणु आधे घण्टेमें समाप्त हो जाते है। डा. टाटलिट

४. 'घी जलानेसे रोग कृमियोंका नाश होता है।' हेफकिन

इस प्रकार भारतीय यज्ञ चिकित्सा प्रणाली अत्यन्त उपयोगी है। जिसका बहिष्कार करके ही आज हम दुःखी हैं। अतः आवश्यकता है कि हम पुनः यज्ञायोजनाकी व्यवस्था करें, स्वयं नित्य हवन कर रोगोंसे संदिग्ध विश्वको सुखद वातावरण बनानेकी दिशामें कदम बढावें। ० ० ०

संस्कृत-पाठ-माला

[२४ भाग]

(संस्कृत भाषाका अध्ययन करनेका सुगम उपाय)

प्रतिदिन एक घण्टा अध्ययन करनेसे एक वर्षमें आप स्वयं रामायण-महाभारत समझ सकते हैं।

२४ भागोंका मूल्य	१२)	१।)
प्रत्येक भागका मूल्य	॥)	≈)

संस्कृत पुस्तकें

१ कुमुदिनीचंद्र	४)	॥≈)
२ सूक्ति-सुधा	।-)	-)
३ सुबोध-संस्कृत-ज्ञानम्	१।)	।)
४ सुबोध संस्कृत व्याकरण भाग १ और २, प्रत्येक भाग	॥)	≈)
५ साहित्य सुधा (पं.मेधाव्रतजी) भा.१	१।)	।)

मंत्री— स्वाध्याय मंडल, पोस्ट- 'स्वाध्याय मण्डल (पारडी)' पारडी, [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वैदिक देवता विज्ञान

(५)

(लेखक— श्री 'उद्धव' संचालक, श्री रविधाम, केन्द्र- महिदपुर [म. प्र.])

[गताङ्कसे आगे]

★

... सारांश यह है कि– यज्ञ करनेका अर्थ अपने हाथोंको सारे हाथोंके, अथवा संपूर्ण राष्ट्रके अर्पण कर देना है। अपने नेत्रोंको सब नेत्रोंके अथवा सारे समाजके समर्पण करना है, अपने मनको सब मनोंके भेंट करना है। अपने हितको देशहितमें लीन करना है, और सबको ऐसा भान करना है कि मानो वे सब मेरे ही स्वरूप हैं। दूसरे शब्दोंमें इसका अर्थ 'तत्त्वमसि' (वह तू है) को व्यवहारमें लाकर अनुभव करना है।

जैसे सूली पर चढनेके पश्चात् ईसाके दिव्य स्वरूपका पुनरुत्थान हुआ था, उसी प्रकार देहात्माका वध करनेके पश्चात् आप ही विश्वात्मारूपका पुनरुत्थान होता है। यही वेदान्त है।

यह यज्ञ प्रत्येक मनुष्यको करना चाहिये और यही विश्वव्यापी धर्म होना चाहिये। हे भारतवर्ष! इसको स्वीकार कर, नहीं तो तेरा अन्त है। इसके अतिरिक्त तेरे लिये कोई दूसरा उपाय नहीं।'

यज्ञ शब्द 'यज्' धातुसे बनता है। यज् धातुका अर्थ देवपूजा, सङ्गतिकरण और दान है। अपनेसे जो बडे हैं, वे देव समान हैं। उनकी पूजा करना यज्ञ है। बराबर वालोंके साथ संगति करना और छोटोंको कुछ देना भी यज्ञ ही है। यह छोटाई बडाई केवल मनुष्योंमें ही न समझनी चाहिये, प्रत्युत संसारका चाहे जो पदार्थ हो, चाहे जो शक्ति हो और चाहे जो गुण हो, यदि वह बडा है तो पूजनीय है, यदि बराबर वाला है तो मिलनेके योग्य है और यदि छोटा है तो कुछ पानेका अधिकारी है। जिस प्रकार उक्त तीनों व्यक्ति हमसे पूजा, संगति और दान पानेके अधिकारी हैं, उसी तरह हम भी दूसरोंके द्वारा योग्यतानुसार पूजा, मेल और दान पानेके अधिकारी हैं, इस प्रकारसे समस्त जड और चेतन जगत्को परस्पर एक दूसरेसे लाभ पहुंचाना ही यज्ञ है। ऐसे महान् यज्ञको शतपथ ब्राह्मण १-७-४५ में—

'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म'

श्रेष्ठतम कर्म कहा गया है। इसका अभिप्राय यही है कि जितने श्रेष्ठतम कर्म हैं, सब यज्ञ ही हैं।

—वैदिक सम्पत्ति

वेदाचार्य पं. सातवलेकरजी लिखते हैं—

'यज्ञाद्भवति पर्जन्यः' (गीता ३।१४)

यज्ञसे पर्जन्य होता है। अर्थात् यज्ञ न हुए तो पर्जन्य नहीं होता और अकाल होता है। अकाल होनेसे अन्न नहीं होगा और अन्नके अभावमें सब भूत मृतवत् होंगे। यहां तक यज्ञचक्रका प्रभाव कहा है। यह यज्ञका चक्र ऐसा है–

यज्ञसे मेघ – मेघसे वृष्टि – वृष्टिसे अन्न

कर्मसे यज्ञ – शरीरसे कर्म – अन्नसे शरीर

यह चक्रक्रमसे भ्रमण होता रहता है। इसमेंसे एक भी यथाक्रम न होगा, तो सब चक्र टूट जायगा और भूतमात्रकी स्थिति नहीं होगी। महानारायण उपनिषद्में कहा है–

'ताभिः पर्जन्यो वर्षति।
पर्जन्येनौषधिवनस्पतयः प्रजायन्ते॥

(म. ना. २३।१)

'पर्जन्य वृष्टि करता है और वृष्टिसे ओषधियां और वनस्पतियां उत्पन्न होती हैं।' इस रीतिसे यज्ञसे पर्जन्य होकर अन्नकी उत्पत्ति होती है। यहां प्रश्न होता है कि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यज्ञसे पर्जन्य कैसे हो सकता है ? इसके उत्तरमें मनुका वचन देखिये--

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते ।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ॥

' अग्निमें दी हुई आहुति आदित्यके पास जाती है, आदित्यसे वृष्टि, वृष्टिसे अन्न और उससे सब प्रजाकी उत्पत्ति होती है । ' यही विषय महाभारतमें निम्न लिखित प्रकारसे कहा है—

यज्ञात्प्रजा प्रभवति नभसोऽम्भ इवामलम् ॥१०॥
अग्नौ प्रास्ताहुतिर्ब्रह्मनादित्यमुपगच्छति ।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ॥११॥
-- म. भा. शां. अ. २६५

' यज्ञसे प्रजा होती है, जैसा आकाशसे निर्मल जल होता है । यज्ञकी अग्निमें रखी हुई आहुति आदित्यके पास जाती है, आदित्यसे वृष्टि, वृष्टिसे अन्न और उससे प्रजा होती है । ' यज्ञसे वृष्टि होनेके विषयमें शतपथ ब्राह्मणमें यह वचन है--

स यदि वृष्टिकामः स्यात् । यदीष्टया वा यजेत...
ब्रूयाद्वृष्टिकामो वाऽअस्मीति तत्रोऽअध्वर्युं
ब्रूयात्पुरोवातं च विद्युतं च मनसा ध्यायेति ।
अभ्राणि मनसा ध्यायेत्यग्नीध्रं स्तनयित्नुं च
वर्षं च मनसा ध्यायेति होतारं सर्वाण्येतानि
मनसा ध्यायेति ब्रह्माणं, वर्षति हैव तत्र यत्रैवं
ऋत्विजः संविदाना यज्ञेन चरन्ति ॥
(श. १।५।२।१९)

' यदि यजमानकी इच्छा वृष्टि होनी चाहिये ऐसी हो तो वह पर्जन्येष्टि करे, उस समय यजमान कहे कि वृष्टिकी इच्छा है, अतः अध्वर्यु वायु और बिजलीका ध्यान करे, अग्नीध्र अभ्रोंका ध्यान करे, होता मेघगर्जना और वृष्टिका ध्यान करे और ब्रह्मा इन सबका ध्यान करे । ऐसे ज्ञानी ऋत्विज जहां होते हैं, और वे यदि मनसे ऐसा ध्यान करेंगे और इष्टि करेंगे, तो वहां अवश्य वृष्टि होगी । '

यहां याज्ञवल्क्य मुनि निश्चय पूर्वक कहते है कि ' वृष्टि होगी ' । इससे पता लगता है कि पर्जन्येष्टिमें इस प्रकार मानस ध्यान करनेसे कुछ अपूर्व बल पैदा होकर वृष्टि होती होगी । हमें इस बातका अनुभव नहीं है और न ऐसे मनोबलवाले ऋत्विज आजकल कहीं मिलेंगे । इसलिये इस विषयमें अधिक लिखना असंभव है । तथापि वैदिक वाङ्मयके देखनेसे पता लगता है कि उस समय पर्जन्येष्टिसे यथेप्सित वृष्टि हुआ करती थी ।

यदि आकाशमें बादल आये हों और वृष्टि न होती हो तो तो नीचेसे ऊर्ध्वमुखी तोपें चलानेसे वृष्टि होती है । इसका कारण यह है कि मेघमंडलमें हलचल होनेसे वृष्टि होती है । आजकल कई स्थान पर अमेरिका और यूरपमें मेघमंडलमें विद्युत्संचार कराकर वृष्टि करनेका यत्न किया गया और वह सफल भी हुआ है । जहां युद्ध होते हैं और बहुत तोपोंकी मार होती है, वहां यदि आकाशमें मेघ हों तो वृष्टि होती है, यह सैनिकोंका अनुभव है । तोपोंमें अग्नि है और यदि उसको दुर्गंध पदार्थोंका हवन माना जाय तो भी बात बन सकती है । इससे यदि इतना सिद्ध हो जाय कि मेघमंडलमें इस प्रकारकी हलचल करनेसे कुछ न कुछ वृष्टिकी संभावना होगी, तो वह बात सशास्त्र विधि पूर्वक किये गये हवनोंसे भी होना संभव हो सकता है ।

आजकल जो घरमें हवन होते हैं, वे बहुत ही अल्प प्रमाणमें होते हैं, उनका इष्ट या अनिष्ट परिणाम मेघमंडल पर होना असम्भव है । परन्तु जहां बडे यज्ञ और महान् सत्र होते हैं, जहां कई दिन बृहद्धवन किये जाते हैं, जहां घृतकी धाराएं हवनमें गिरती हैं, और जहांके हवनका धुँआ मीलोंकी दूरी परसे भी दीखता है, वहांके हवनका परिणाम मेघमंडल पर होना संभव है । हवनकी अग्निसे हलकी बनी हुई वायु ऊपर जाती है और वहां चारों ओरकी वायु आ जाती है । इस प्रकार जो गति वायु मंडलमें होती है, इससे यज्ञ प्रदेशकी ओर चारों दिशाओंमें स्थित वायुकी गति बनती है और यदि यह गति अनेक दिन रही तो उस प्रदेशकी ओर हवाके साथ बादल आना भी संभव हो सकता है ।

यह गति जिस प्रमाणसे होगी और जितने दिन तक रहेगी, उसी प्रमाणसे बादलोंका आना और वृष्टिका होना संभवनीय हो सकता है । यहां कई लोग कहेंगे कि जिस समय बडे जंगलोंमें आग लगती है, वहां उक्त वृष्टि होती होगी ? होती है, प्रायः होती है, परंतु उन दिनोंमें बादलोंकी संभावना होनी चाहिये । वर्षाऋतुमें ही पर्जन्येष्टियां की जाती हैं, अन्य ऋतुमें नहीं । जिन देशोंमें हरमासमें वृष्टि होती होगी, उन देशोंमें आकाशमें बादलोंका आना और यज्ञसे वृष्टि होना संभव हो सकता है ।

यहां कई लोग पूछेंगे कि यदि केवल जंगलकी लकडियां जलानेसे वृष्टि होना संभव होगा तो विधि पूर्वक यज्ञ कर-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नेकी क्या आवश्यकता है ? इस प्रश्नका उत्तर ऐसा है कि विधि पूर्वक किये गये हवनसे अन्यान्य लाभ भी होते हैं। पूर्वोक्त स्थानमें कहा है कि 'ये ओषधियोंके महामख हैं, ऋतु संधियोंमें किये जाते हैं, क्योंकि ऋतु संधिमें व्याधिएं होती हैं,' (गोपथ ब्राह्मण)

अर्थात् यज्ञकी सिद्धाग्निमें जो ओषधियां डाली जाती हैं, अग्निसे उनके सूक्ष्म परमाणु बनकर वे हवामें जाते हैं, मेघमंडलमें पहुंचते हैं और अन्य-अन्य स्थानोंकी वायुमें भी रहते हैं। घृतके अणु रोगजन्तुओंका संहार करनेवाले हैं। सोमादि ओषधियोंके अंश भी इसी प्रकार रोगबीज दूर करते हैं। यज्ञमें हवन किये गये घृतका महत्व रोगनाशनके संबंधमें विशेष ही है। केवल घृतका हवन करनेसे भी कई सांघिक रोगोंका दूर होना संभव है। जब कोई सांघिक रोग होता है और ग्रामोंमें उसका उपद्रव शुरू होता है, तो प्रत्येक घरमें और चौराहों पर बृहद्धवन करनेसे रोग दूर होता है।

इस तरह बृहद्धवनोंके द्वारा जो घृतके और विविध ओषधियोंके अणु मेघमंडलमें जाते हैं और हवामें रहते हैं। वे वृष्टिजलके साथ भूमिपर आकर, उनका भूमिस्थानीय अनंत वृक्षों, वनस्पतियों और कृषियोंके लिये एक पौष्टिक और शुद्ध जीवनीय रस मिलता है। वृक्षादिकोंको उत्तम खाद देनेकी यह रीति है। हवा शुद्धि, वृष्टिका नियमन, जल शुद्धि और वृक्षरसोंकी पुष्टि, इतनी बातें हवन रूप यज्ञसे सिद्ध होती हैं। ऐसा हम हवन विधिके ग्रन्थोंसे अनुमान निकाल सकते हैं। यह युक्ति युक्त भी प्रतीत होता है, तथापि इसके प्रयोग करके देखने चाहिये और जो बात प्रयोगोंसे सिद्ध हो वही माननी चाहिये।

होम हवन रूप यज्ञोंसे वृष्टि किस तरह होती है, इसकी रीति हमने यहां देखी। इसी विषयमें निम्न लिखित मंत्र भी देखने योग्य है—

> कृष्णं नियानं हरयः सुपर्णा
> अपो वसाना दिवमुत्पतन्ति।
> त आववृत्रन्त्सदनादृतस्या
> दिद् घृतेन पृथिवी व्युद्यते॥ ऋ. १।१६४।४७

'जल लेनेवाली, जलका हरण करनेवाली आदित्यकी किरणें आकर्षणके मार्गसे द्युलोकको जाती हैं। उदकके स्थानसे वे आकर उनके द्वारा जलसे भरपूर की जाती है। अर्थात् पृथ्वी परका जल सूर्य किरणोंसे बाष्परूपमें ऊपर आकाशमें उडता है, उसके मेघ बनते हैं, वे मेघ वृष्टिरूपसे पृथ्वी पर आकर जल बर्षाते हैं। वृष्टि होनेका क्रम वेदमें इस प्रकार बताया है, इसके अनुसार जब ये सूर्य किरणों द्वारा भाप होकर जलके अणु ऊपर जाते हैं, उनके साथ हवनके द्वारा सूक्ष्म बनाये गये घृतके और सोमादि ओषधियोंके अणु यदि भेजे जायंगे, तो वे जलको ओषधिगुणोंसे युक्त बना देगा, और प्राणियोंके लिये भी आरोग्यवर्धक होगा।

यज्ञसे मेघ, मेघसे पर्जन्य और पर्जन्यसे अन्न होनेमें दूसरी रीतिसे भी एक आत्म समर्पण रूप यज्ञ हो रहा है। यह यज्ञ भी यहां अब देखना चाहिये। जलका आत्म समर्पण होकर उसकी भाप बनकर मेघ बनते हैं, अर्थात् जलके आत्म समर्पण रूप यज्ञसे मेघोंकी उत्पत्ति होती है। मेघ भी इसी प्रकार आत्मसमर्पण करते हैं, जिसका नाम वृष्टि हैं। मानो परोपकारके लिये मेघ अपना अस्तित्वतक समर्पित करते हैं। इस मेघोंके आत्म समर्पणसे संपूर्ण वृक्षवनस्पति सृष्टि और जीवसृष्टि पाली जाती है, अर्थात् किसीका पालन होनेके लिये दूसरेका आत्म समर्पण रूप यज्ञ होना आवश्यक है, यही बात आगेके यज्ञोंमें देखी जाती है।

मेघोंसे वृष्टिके द्वारा जल पृथ्वी पर आनेपर वह जल फिर वृक्षों और प्राणियोंके जीवनके लिये आत्म समर्पण करता है। जब यह जल उन वृक्षवनस्पतियों और प्राणियोंके शरीरका भाग बनता है, तब उनका जीवन होता है। इनके अस्तित्वके लिये मानो जलको अपने अस्तित्वका समर्पण करना होता है। इसी प्रकार अन्न भी आत्म समर्पण करके प्राणियोंके जीवनका हेतु बनता है प्राणी अपने जीवन भूत रजवीर्यका समर्पण रूप यज्ञ करके ही प्रजा उत्पन्न करते हैं। इस प्रकार यज्ञसे यह सब जगत् चल रहा है। यह यज्ञ परमेश्वरीय नियमसे चल ही रहा है। इसलिए यज्ञ होनेपर भी जलको यज्ञ करनेका पुण्य प्राप्त नहीं होता। क्योंकि जलका यज्ञ ईश्वरीय नियमसे हो रहा है। उसमें जलकी इच्छाका भाग कारणी भूत नहीं है।

मनुष्य इस परमेश्वरीय नियमका अवलोकन करे और ईश्वरका यज्ञसूत्र कैसा चल रहा है, यह देखे, तथा स्वयं अपनी इच्छासे आत्म समर्पण रूप यज्ञ करे। मनुष्य चूंकि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वेच्छासे यह आत्म समर्पण करता है, इसलिये इसको पुण्य प्राप्त होता और यज्ञ न करनेसे उसकी अधोगति होती है। मनुष्यको परमेश्वरने स्वातंत्र्य दिया है, इसलिये अपनी स्वतंत्र इच्छासे इसको यह यज्ञ चलाना चाहिये, यह उसका अत्यंत आवश्यक कर्तव्य है।

यज्ञ संस्था अत्यंत प्रभावशाली है, इसलिये उसका उपयोग बडी सावधानीसे होना चाहिये। जो शस्त्र अत्यंत तीक्ष्ण और प्रभावशाली होता है, उसका उपयोग भी बडी चतुरतासे करना चाहिये, अन्यथा हानि होनेमें कोई शंका ही नहीं।

इस समय जो यज्ञ करते हैं, उस विषयमें भी यही कह सकते हैं कि यदि इसमें त्रुटि हो गई तो बडा अनर्थ होना संभव है इसलिये इस विषयकी विशेष चर्चा होना अत्यावश्यक है।

गीताके यज्ञ

१ ब्रह्मार्पण यज्ञ— इसमें ब्रह्ममें ब्रह्मभावसे पदार्थका अर्पण होता है।

२ दैवयज्ञ— इस यज्ञमें अग्नि, सूर्य आदि देवताओंके साथ अपने वाक्, चक्षु आदिका संबंध अनुभव करके दैवीशक्तिके द्वारा अपनी शक्तियोंकी उन्नति करनेका साधन होता है।

३ ब्रह्माग्नियज्ञ— इसमें ब्रह्माग्निमें यज्ञसे यज्ञ होता है।

४ संयमाग्नियज्ञ— इसमें संयमरूप अग्निमें श्रोत्रादि इंद्रियोंका हवन होता है इन्द्रियोंका संयम और भोग बढानेकी इच्छा कम करनी पडती है।

५ इंद्रियाग्नियज्ञ— इसमें शब्दादि विषयोंका अर्पण योग्य मर्यादा तक इंद्रियोंमें करना पडता है।

६ योगाग्नियज्ञ— इसमें योगाग्निमें इन्द्रियों और प्राणोंके कर्मोंका हवन होता है।

७ द्रव्ययज्ञ— इसमें द्रव्यका परोपकारके शुभ कार्योंमें व्यय होता है।

८ तपोयज्ञ— इसमें शीत-उष्णादि द्वन्द्व सहन करनेका अभ्यास बढाना पडता है।

९ योगयज्ञ— इसमें योग साधनके सब प्रकार आते हैं और योग साधन द्वारा आत्मोन्नति होती है।

१० स्वाध्याययज्ञ— इसमें वेदादि सत्यविद्याके ग्रन्थोंका अध्ययन तथा अध्यापन करना पडता है।

११ ज्ञानयज्ञ— इसमें स्वाध्याय तथा प्रवचन करना पडता है।

१२ प्राणायामयज्ञ— इसमें आहारका नियम करके प्राणोंका प्राणमें अर्पण होता है।

१३ प्राणयज्ञ— इसमें अपानका प्राणमें समर्पण होता है।

ये यज्ञ कर्म अव्यय-आत्माके अनुगामी बनते हुए बंधन नहीं करते हैं, अतः इनमें तत्पर रहना चाहिये। द्रव्ययज्ञकी अपेक्षा ज्ञानयज्ञकर्म कर्मबंधनको क्षय करनेवाला होनेसे और आत्मा, परमात्मा एवं सर्व भूतोंकी सत्ताके अनुभवका हेतु होनेसे सर्व श्रेष्ठ समझना चाहिये।

श्रीमद्भगवद्गीता हिंसामय यज्ञोंको सर्वथा तिरस्करणीय समझती है, इसीलिये उनके वाचक शब्दोंका उच्चारण तक नहीं करती। जहां सबसे श्रेष्ठ यज्ञके वर्णनका प्रसंग आया है, वहां भगवान् कृष्णने कहा —

'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि' (गीता १०।२४)

'यज्ञोंमें मैं जपयज्ञ हूं' ओंकारादि मन्त्रोंका जप करना यह जप यज्ञ है और यही यज्ञ संपूर्ण यज्ञोंमें श्रेष्ठ है।

उपनिषदोंमें यज्ञका वर्णन आया है—

प्लवाह्येते अदृढा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म। एतच्छ्रेयो येऽभिनंदन्ति मूढा जरामृत्युं ते पुनरेवापि यन्ति ॥ ७ ॥ मुंडक १।२।७

'जिसमें अठारह ऋत्विजोंका अवर कर्म है, वह यज्ञरूप नौका दृढ नहीं है, अर्थात् उससे मनुष्य पार नहीं हो सकता। इसीको जो मूढ लोग श्रेय अर्थात् कल्याण कारक समझते हैं, वे बरावर मृत्युके ही आधीन होते हैं।

देवताका ज्ञान—

प्रस्तोतर्या देवता प्रस्तावमन्वायत्ता तां चेद्विद्वान्प्रस्तोष्यसि मूर्धा ते विपतिष्यति ॥ ९ ॥ उद्गातर्या देवतोद्गीथमन्वायत्ता तां चेदविद्वानुद्गास्यसि मूर्धा ते विपतिष्यतीति ॥ १० ॥ प्रतिहर्तर्या देवता प्रतिहारमन्वायत्ता तां चेदविद्वान्प्रतिहरिष्यसि मूर्धा ते विपतिष्यतीति ॥ ११ ॥ (छांदोग्य १।१०)

'हे प्रस्तोता, हे उद्गाता तथा हे प्रतिहर्ता! जिन देवताओंका स्तवन तुम करते हो, उन देवताओंके स्वरूपको न जानते हुए यदि तुम अपना कर्म करोगे तो तुम्हारा मस्तक टूट जायगा।' इसका तात्पर्य यह है कि यज्ञमें जो ऋत्विज होते हैं, उनको उचित है कि वे यज्ञीय देवताओंका ठीक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकारसे स्वरूप विज्ञान प्राप्त करें और पश्चात् यज्ञका अनुष्ठान करें। देवता स्वरूप विज्ञानके बिना किया हुआ अनुष्ठान यज्ञ कर्ताकी हानि करता है। यह यज्ञशास्त्रका तत्व है। यह यज्ञतत्व आजकल कितने लोग जानते हैं? और यदि नहीं जानते, तो उनके यज्ञसे निःसंदेह लाभ होगा इस विषयमें प्रमाण क्या है?

योग साधनमें एक आत्मोन्नतिकी यह विधि है कि-जिसमें अपने शरीरके अंतर्गत शक्तियोंका संबंध बाह्य देवताओंके साथ देखना, जानना और अनुभव करना होता है तथा बाह्य देवताकी शक्तिसे अपनी इन्द्रिय शक्तिकी वृद्धि होती है। यही विषय पूर्वोक्त छान्दोग्य उपनिषद्के वचनमें कहा है। यज्ञ विधिमें भी इसी ज्ञानकी अत्यंत आवश्यकता है। इस ज्ञानके बिना किया हुआ यज्ञ सफल नहीं हो सकता। इस प्रकारके देवताके ज्ञानी ऋत्विज जहां होते हैं, वह यज्ञ पवित्रता करनेवाला होता है। इस विषयमें उपनिषद् कहती है—

आसां देवतानामस्यास्त्रय्या विद्याया वीर्येण यज्ञस्य विरिष्टं संदधाति। भैषजकृतो ह वा एष यज्ञो यत्रैवंविद् ब्रह्मा भवति॥ (छां ४।१७।८)

'इन देवताओंके और त्रयी विद्याके वीर्यसे यज्ञका दोष दूर होता है। जिस यज्ञमें ऐसा ज्ञानी ब्रह्मा होता है, वह यज्ञ औषध रूप होता है।' इसका स्पष्ट तात्पर्य यह है कि यदि ऋत्विज इस प्रकारके ज्ञानी नहीं होंगे तो उन यज्ञोंके विविध दोषोंसे दूषित होनेमें कोई शंका नहीं हो सकती।

उपनिषत्कारोंके मतसे यह बाह्य यज्ञ केवल इसीलिए है कि आंतरिक यज्ञकी बात उपासकोंके मनमें स्थिर हो जाय। देखिये—

स्वे शरीरे यज्ञं परिवर्तयामीति। तत्र सूर्योऽग्निः एक ऋषिर्भूत्वा मूर्धनि तिष्ठति। दर्शनाग्निर्नाम चतुराकृतिराहवनीयो भूत्वा मुखे तिष्ठति। शारीरोऽग्निर्नाम जराप्रणुदा हविरवस्कंदति... दक्षिणाग्निर्भूत्वा हृदये तिष्ठति तत्र कोष्ठाग्निरिति। गार्हपत्यो भूत्वा नाभ्यां तिष्ठति। ... प्रजननकर्मा। —प्राणाग्निहोत्र

'अपने शरीरमें यज्ञका परिवर्तन करता हूं। वहां सूर्याग्नि ... सिरमें रहता है। ... आहवनीयाग्नि मुखमें रहता है। शारीराग्नि अन्न खाता है ... वह दक्षिणाग्नि होकर हृदयमें रहता है, उसीको कोष्ठाग्नि कहते हैं। ... यह गार्हपत्याग्नि बनकर नाभिमें रहता है ... यह संतान उत्पन्न करता है।'

उपर्युक्त कथन कितना भावपूर्ण है! यज्ञके सच्चे स्वरूपका पता यहां लगता है। ... शरीरमें क्या होता है यह किसीको भी पता नहीं है, यह बतानेके लिये ही ये यज्ञ बाहर बनाये जाते हैं। ... जब अपने शरीरमें यह यज्ञ कैसे देखना, इस विषयमें उपनिषद्के वचन देखिये—

वाग्वै यज्ञस्य होता। चक्षुर्वै यज्ञस्याध्वर्युः। प्राणो वै यज्ञस्योद्गाता। मनो वै यज्ञस्य ब्रह्मा।
—बृहदा. उ. ३।१।२-६

'वाणी, चक्षु, प्राण और मन ये क्रमशः यज्ञके होता, अध्वर्यु, उद्गाता तथा ब्रह्मा हैं।'

यज्ञस्यात्मा यजमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिर्लोमानि बर्हिर्वेदः शिखा हृदयं यूपः काम आज्यं मन्युः पशुस्तपोऽग्निर्दमः शमयिता दक्षिणा वाग्घोता प्राण उद्गाता चक्षुरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा श्रोत्रमग्नीधावद् ध्रियते सा दीक्षा, यदश्नाति तद्धविर्यत्पिबति तदस्य सोमपानं॥ ८०॥ (म. नाराय.)

इन सब प्रमाणोंका तात्पर्य यह है—

१	यज्ञ	= मनुष्य।
२	यज्ञमंडप	— मनुष्य शरीर।
३	यज्ञका समय	— आयुकी समाप्ति तक।
४	अग्नि	— आहवनीयाग्नि-मुख, गार्हपत्याग्नि कोष्ठ, पेट, दक्षिणाग्नि-हृदय।
५	यजमान	— आत्मा।
६	यजमानपत्नी	— बुद्धि, श्रद्धा।
७	ब्रह्मा	— मन।
८	अध्वर्यु	— अहंकार, चक्षु।
९	होता	— चित्त, वाक्।
१०	ब्राह्मणच्छंसी	— प्राण।
११	प्रतिप्रस्थाता	— अपान।
१२	प्रस्तोता	— व्यान।
१३	उद्गाता	— उदान।
१४	शमिता	— दम, संयम।
१५	मैत्रावरुण	— समान।
१६	पशु	— काम, क्रोध, लोभादि।
१७	यज्ञपात्र	— ज्ञानेन्द्रियां।
१८	हविर्द्रव्य	— कर्मेन्द्रियां, भक्ष्यान्न।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

१९ इष्टि – अहिंसा।
२० सोमरस – जलपान।
२१ दर्भ – बल, केश।
२२ वेदि – हृदय।
२३ देवता – शरीरमें प्रत्यक्ष रहनेवाली इंद्रियोंके प्राण।

.... यह यज्ञ प्रत्यक्ष है। इसीमें देवताओंका प्रत्यक्ष दर्शन और अनुभव होता है। जैसा कि पूर्व उपनिषद्में कहा है 'इस शरीरमें सब देवताएं रहती हैं' ठीक यही बात वेदमें भी कही है। देखिये—

तस्माद्वै विद्वान् पुरुषमिदं ब्रह्मेति मन्यते।
सर्वा ह्यस्मिन्देवता गावो गोष्ठ इवासते॥
अथर्व १२।८।३२

'इसलिये इस पुरुषको जाननेवाला ज्ञानी यह ब्रह्म है, ऐसा कहता है; क्योंकि इसमें सब देवताएं उस प्रकार इकट्ठी रहती हैं, जैसी गौएं गोशालामें रहती हैं।'

उक्त प्रमाणोंमें विभिन्न दृष्टियोंका संग्रह हुआ है। कहीं विधिवत् यज्ञ करनेपर जोर दिया है, कहीं चारों वेदोंके ज्ञाताकी आवश्यकता बतलाई गई है, कहीं अथर्ववेदकी प्रधानता कही है, कहीं ऋत्विज वरणकी विशेषता है, कहीं वर्तमान समय यज्ञके अनुकूल नहीं है, इसका प्रतिपादन किया है; कहीं यज्ञकी व्यापकता दिखलाई है; कहीं यज्ञको आवश्यक कर्तव्य कर्म कहा है; कहीं अन्य यज्ञोंसे ज्ञानयज्ञ एवं जपयज्ञकी श्रेष्ठता कही है, कहीं देवता विज्ञान पर जोर दिया है और कहीं अध्यात्म यज्ञकी अनुभूति आवश्यक बतलाई है। इस प्रकार यहां विभिन्न दृष्टियोंसे यज्ञ और देवताओंके विषयमें प्रमाण दिये हैं।

इन प्रमाणोंका विचार करनेसे और वर्तमानके प्रचलित यज्ञोंको देखनेसे दोनोंका परस्पर मेल नहीं मिलता। आजकलके यज्ञ बहुधा मनमाने ही होते हैं। उनमें चारों वेदोंके ज्ञाता नहीं होते हैं, न अथर्ववेदी ब्रह्मा ही मिलते हैं। ऋत्विजोंका वेदार्थकी ओर तथा देवता विज्ञानकी ओर ध्यान ही नहीं जाता। कहीं तो केवल यज्ञके नामसे दुकानदारी चल गई है। यज्ञमें स्वाध्यायरूपी ज्ञानयज्ञको तो भुला ही दिया है। वेदके ज्ञानविज्ञानकी शत्रु चर्चा करनेवाले इन नामधारी याज्ञिकोंको शत्रु ज्ञात होते हैं।

प्राचीन समयमें वेदके ज्ञान विज्ञानके अनुसार विधि विधानसे यज्ञ होते थे, तब असुर यज्ञ ध्वंसका कार्य करते थे। वर्तमानमें अब आसुरी संपत्तिको अपना कर यज्ञ विज्ञान एवं देवता विज्ञानका अन्वेषण न कर विधिहीन यज्ञ किये जाते हैं। गतानुगतिक सामान्य जनताकी भोली श्रद्धाका दुरुपयोग किया जा रहा है। इस प्रकारके यज्ञोंसे वेद, यज्ञ एवं देवता विज्ञानका तिरस्कार किया जा रहा है तथा वास्तविक धर्मसे मानवोंकी श्रद्धा शिथिल की जा रही है।

ऐसे यज्ञोंके विस्तारका मूल कारण तो दक्षिणाका लोभ ही है। कुछ विद्वज्जन तो उक्त कारणोंको जानते हुए भी दक्षिणार्थ मौन साध लेते हैं। उन्हें भगवानके—

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥
हो अनन्य जो मेरा चिन्तन करते, भजते मुझे सप्रेम।
नित्य योग-युत उन पुरुषोंका मैं करता हूं योगक्षेम॥
—गीता ९।२२

इस अभय वचन पर विश्वास नहीं है। ये यज्ञ प्रचारक लोग वेद विज्ञान, यज्ञ विज्ञान और देवता विज्ञानकी चर्चा करनेवाले ज्ञान यज्ञसे कोसों दूर भागते रहते हैं, निमंत्रण देनेपर भी उपस्थित नहीं होते। क्योंकि ज्ञान यज्ञमें या तो दक्षिणा मिलती ही नहीं अथवा अल्प मिलती है। ये लोग बिना जाने ही कर्म करना उत्तम समझते हैं।

ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि।

अर्थात् जानकर कर्म करनेकी आज्ञाकी ओर दृष्टि नहीं है ये लोग अपने अनुकूल चलनेवालोंका समूह बना रखते हैं और सिद्ध-साधक बनकर यज्ञ खडा कर लिया करते हैं। इनके यज्ञमें गोघृतका पता ही नहीं लगता। ऋत्विजोंके अध्यात्म यज्ञमें डालडाका प्रयोग किया जाता है। यों द्रव्यका दुरुपयोग एवं यज्ञ जैसे 'श्रेष्ठतम कर्म' को हीन कर्म कर रहे हैं। यह उपर्युक्त महानुभावोंके कथनोंसे स्पष्ट ज्ञात हो जाता है।

यज्ञ और देवताओंके विषयमें निश्चित वैज्ञानिक प्रमाण हमने 'यज्ञ और देवता विज्ञान' में समीक्षा चक्रवर्ती राजपंडित वेदविद्या समुद्धारक स्व. श्री मधुसूदनजी ओझाकी वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे दिये हैं। विचारक पाठकवृन्द उन प्रमाणोंका वेदकी वैज्ञानिक दृष्टिसे अवश्य विचार करें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ॐ

वेदोंके अध्ययन करनेकी पद्धति

लेखक— श्री. दा. सातवलेकर

देवताओंका वर्णन

वेदके सूक्तोंमें देवताओंका वर्णन है। देवता उपास्य हैं और ऋषि उपासक हैं। उपासक ऋषि देवताओंके पास आयु, धन, यश आदि मांगते हैं और वे जो मांगते हैं, देवता उनको वह देते हैं।

अर्थात् देवता देनेवाले हैं और ऋषि लेनेवाले हैं। अतः देवता सामर्थ्यवान् हैं और ऋषि उनसे सामर्थ्य प्राप्त करना चाहते हैं। इस कारण, देवता श्रेष्ठ और ऋषि उन देवताओंकी अपेक्षासे शक्तिमें कम हैं। इसलिए ऋषिवार मंत्र गणना करनेकी अपेक्षा यदि देवतावार मंत्र संग्रह किया जाय तो अध्ययनके लिये अधिक अच्छा होगा। इस दृष्टीसे 'आर्षेय संहिता' की अपेक्षासे 'दैवत संहिता' अधिक अच्छी है। आजकी ऋग्वेद संहिता 'आर्षेय संहिता' है, केवल नवम मंडल 'दैवत संहिता' है।

संहिताओंका वर्गीकरण तीन प्रकारसे हो सकता है- (१) आर्षेय संहिता, इसमें ऋषियोंके अनुसार मंत्र संग्रह होगा जो आज ऋग्वेदमें है। (२) दूसरी 'दैवत संहिता,' इसमें देवताओंके क्रमसे मंत्र संग्रह होगा जैसा 'दैवत संहिता' में किया है। (३) तीसरी 'छांदस संहिता' इसमें छंदके अनुसार मंत्र संग्रह होगा। अनुष्टुप्, त्रिष्टुप् आदि छंदोंके मंत्र एकत्रित होंगे। इन सबसे देवतानुसार मंत्र संग्रह करना, अर्थात् दैवत संहिताका निर्माण करना, अध्ययनके लिए अधिक लाभ दायक है, क्योंकि इसमें एक एक देवताके गुण और कार्य एकत्रित होते हैं इसलिये ऐसा देवतावार वर्गीकरण अधिक लाभ दायक है।

देवताके गुण और कार्य जानना और वैसे गुण अपने अन्दर लाना, उनको बढाना और देवता जैसे स्वयं कार्य करना इससे मानव मात्रकी उन्नति हो सकती है।

'यत् देवा अकुर्वन्, तत् करवाणि।
श. ब्रा—

जैसा देव करते हैं वैसा मैं करूँगा और मैं देव बनूंगा। यह वैदिक उपासना है। मनुष्यसे देव बनना है, राक्षस नहीं है।

'राक्षस–मनुष्य--देव'

मनुष्य नीच बना तो राक्षस होगा और उच्च बना तो देव होगा। अतः मनुष्यको देवोंका वर्णन देख कर देव जैसा बननेका प्रयत्न करना चाहिये। इसलिये वेदमें देवोंका वर्णन है, वह मानवके सामने आदर्श रखनेके लिये।

अतः यदि हम सब चारों वेदोंका मंत्र संग्रह देवतावार करेंगे तो वह मंत्र संग्रह वेदका विषय समझनेके लिये अधिक अच्छा होगा। कमसे कम देवतावार संग्रहमें एक एक देवता के मंत्र तो एक स्थान पर आजायेंगे और एक देवताके मंत्र एक स्थान पर संग्रहित होनेसे अर्थका अनुसंधान करनेके लिये अधिक सुविधा निःसंदेह होगी।

आज ऋग्वेद संहिता ऋषिवार संग्रहित है, केवल नवम मंडल देवता मंडल है, यजुर्वेद यज्ञके अनुसार संग्रहित है, सामवेद पूर्वार्चिक देवतावार है, परन्तु उत्तरार्चिक वैसा नहीं है। अथर्ववेदमें अन्तिम ८ काण्ड विषयवार संग्रहित है, शेष काण्ड बिखरे हैं। यदि हम चारों संहिताओंके मंत्र देवतावार संग्रहित करके सब मंत्रोंकी एक दैवतसंहिता बनायेंगे तो वह मंत्र संग्रह इस तरह होगा—

चारों वेदोंमें सब मिलकर इतने वेदमंत्र हैं—

ऋग्वेदमें मंत्र १०५५२, यजुर्वेदमें मंत्र ३९७१, सामवेदमें मंत्र १८७५, अथर्ववेदमें मंत्र ५९७७,

यह २२३७५ मंत्रसंख्या चारों वेदोंकी है। इन सब मंत्रोंका देवतावार संग्रह किया तो इस तरह होगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अग्नि देवता मंत्र संख्या २४८३, इन्द्र देवता ३३६३, सोम देवता १२६०, मरुद्देवता ४६४, अश्विनौ देवता ६८९, आयुर्वेद प्रकरण २३४५, रुद्र देवता २२७, उषा देवता १०४, अदिति आदित्याश्च ११३७, विश्वे देवा २३२०, वायु १२३, वरुण १५२, वास्तोष्पति आदयः देवता ३७७१,

बाकीके मंत्र पुनरुक्त हैं । अपुनरुक्त मंत्रोंकी यह संख्या है । सामवेदके १८१५ मंत्र पुनरुक्त हैं, अथर्ववेदमें करीब ३००० मंत्र पुनरुक्त हैं । ऋग्वेदमें भी पुनरुक्त मंत्र हैं । इस कारण देवतावार मंत्र संग्रह करनेसे करीब ४००० मंत्र कम होते हैं ।

देवता विश्वराज्य चलाते हैं

इस विश्वमें पृथिवी, अग्नि, जल, वायु, विद्युत्, सूर्य, चन्द्र आदि अनेक देवताएँ हैं । विश्वराज्यका एक एक कार्य एक एक देवताके पास दिया है और वह कार्य वह देवता अपनी शक्तिके अनुसार कर रहा है । इस कार्यसे सब विश्व यथायोग्य रीतिसे चल रहा है । विश्वका राज्य ये देवता चला रहे हैं अतः इन देवताओंको विश्व राज्यके कार्य कर्ता कह सकते हैं । राज्यके जो कार्यकर्ता होते हैं वे ही विश्वराज्यके मंत्री कहे जा सकते हैं । अर्थात् अग्नि, जल, वायु आदि देवता विश्वराज्यके मंत्री गण हैं । इनकी विशेषता यह है कि ये अपना नियत कार्य उत्तम रीतिसे करते हैं, अपने कार्यमें किसी तरह न्यूनता नहीं करते, न्यूनाधिक नहीं करते, समय पर जो जैसा करना होता है वह वैसा करते रहते हैं । समय पर करते हैं, उनमें रिश्वतखोरी करके न्यूनका अधिक कुछ भी नहीं करते तात्पर्य अपना नियत कार्य यथायोग्य रीतिसे करते हैं । इसलिये हम कह सकते हैं । कि ये देवता मानवोंके लिये आदर्श मंत्री हैं । इनका वर्णन देखकर मानव अपने कार्य नियम पूर्वक, जैसा करना चाहिये वैसा, समय पर, रिश्वतखोरी न करते हुए करनेका पाठ सीख सकता है और अपना सुधार कर सकता है । देवताका वर्णन इस तरह मानवके सामने आदर्श कर्तृत्वका नमूना करके रह सकता है । इस दृष्टिसे देवताओंके गुण-वर्णन मानवका अभ्युदय करनेवाले हो सकते हैं । वैदिक सूक्तोंका इतना उपयोग हुआ तो भी वह कोई कम नहीं है ।

आपसके झगडे

देवता आपसी झगडे भी करते हैं । वे आपसमें मिल जुल कर कार्य करते हैं ऐसा नहीं हैं । अग्नि और जलका ही उदाहरण देखिये । इनका आपसका द्वेष प्रसिद्ध है अग्नि-का नाश करनेके लिए जल सदा तत्पर रहता है । अग्नि पर जल गिराकर देखिये क्या बनता है । पात्रमें पानी रखकर अग्नि पर रखिये, उस जलका नाश अग्नि करता रहेगा । उष्णता इस तरह जलका वैर करती है ।

वायु अग्निकी सहायता करता है । जहाँ अग्नि प्रज्वलित होता है वहाँ उसकी सहायताके लिए वायु जाता है और वह अग्निको अधिक प्रज्वलित करता है । यहां वायु अग्नि-का सहायक है । शुष्क काष्ठोंको अग्नि खा जाता है । यह अग्निका अन्न है । मेघोंमें बिजली चमकती है और मेघोंसे जलकी वृष्टि होती है । यहां मेघों और बिजलीका संघर्ष हम देखते हैं । मेघोंको तोडना यह बिजलीका कार्य है । इससे मेघों और बिजलीका युद्ध होता है । और मेघोंका परा-जय होता है । मेघोंसे वृष्टि होकर वृक्ष वनस्पतियोंका संव-र्धन होता है इससे मेघोंके नाशसे वनस्पतियोंकी वृद्धि होती है । इस तरह इन देवताओंमें आपसके झगडे हैं और उनसे मानवोंका लाभ ही होता है दोनोंके झगडोंसे इस तरह तीसरेका लाभ होता है । मानवोंमें गुटबाजी और आपसकी मित्रता और आपसके झगडे हैं, इसी तरह इन देवताओंमें गुटबाजी और आपसके झगडे हैं । इस लिये ये देवताओंके वैदिक वर्णन मानवोंके लिये अत्यन्त बोध प्रद हैं ।

विश्वराजकी व्यवस्था

विश्वराज्यमें ये देवता राज्य करनेवाले हैं ऐसा मानने पर नीचे दिये अनुसार उनकी राज्य व्यवस्थाका पता लग सकता है—

संपूर्ण विश्वका एक आदर्श राज्य

१ राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति तथा प्रजा

१ परब्रह्म– विश्वराज्यके संमाननीय राष्ट्रपति ।

२ परमात्मा– विश्वराज्यके आदरणीय उपराष्ट्रपति ।

३ अदिति– (प्रकृति, देवमाता) विश्वराज्यके मंत्री तथा उपमंत्रियोंको निर्माण करनेवाली आदि शक्ति, प्रकृति, देवोंको उत्पन्न करनेवाली प्रकृति, प्रजा ।

आत्मा और प्रकृति ये दो पदार्थ हैं । आत्मामें परमात्मा और जीवात्मा हैं । और प्रकृति सब विश्व उत्पन्न करनेवाली शक्ति है ।

'परब्रह्म' सर्वसाक्षी है । उसके रहनेसे सब कुछ विश्वमें बनता है, परन्तु वह स्वयं कुछ करता नहीं । इस-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लिए यह नपुंसक लिंगमें है। राष्ट्रपति रहते हैं, पर कुछ कार्य करते नहीं।

इसी प्रकार 'परमात्मा' शब्द पुल्लिंगमें उपराष्ट्राध्यक्ष के स्थान पर है। यह यद्यपि प्रकृतिके साथ मिलता है, पर कुछ भी स्वयं कर नहीं सकता।

जनराज्यके राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति स्वयं कुछ भी कर नहीं सकते, पर उनके पास सब शक्तियां रहती हैं। 'पुरुष और प्रकृति' ये दो पदार्थ पुरुषके परब्रह्म परमात्मा ये दो रूप हैं। अब 'प्रकृति' सब उत्पत्ति स्थिति लय करनेवाली है। यही सूर्य, चन्द्र, विद्युत्, जल, वायु अग्निको उत्पन्न करनेवाली और उनको विश्वराजकी शासन व्यवस्थामें लगानेवाली है। 'पुरुष' कुछ भी नहीं करता, 'प्रकृति' सब कुछ करती है। इस प्रकृतिसे उत्पन्न हुए सब देवगण विश्वराज्य का कार्य करते हैं।

'प्रकृति' का अर्थ 'प्रजाजन' भी है। 'राजा प्रकृतिरंजनात्' यहां प्रकृतिका अर्थ प्रजा है। राजा अथवा प्रजाध्यक्ष कुछ न करे, परंतु प्रजा ही सब करे। यही बात 'प्रकृति' सब कुछ करती है इसमें दर्शायी है। लोक राज्यमें राष्ट्रपति शक्तिशाली होता हुआ भी कुछ करता नहीं, परंतु प्रजा-प्रकृति-अपनी संपूर्ण राज्य शासन व्यवस्था अपने चुने हुए, निर्माण किए हुए, मंत्रीगणोंके द्वारा चलाती है, अपना सब कार्य करती है।

'पुरुष' कुछ नहीं करता, 'प्रकृति' सब कुछ करती है, इसका तात्पर्य यह है। यह पूर्ण स्वराज्य शासनकी उत्तम बुनियाद है।

२ ध्येय दर्शन

शासन कर्ता मंत्री मंडलका ध्येय यह होना चाहिए—

'पुरुष' के सिर, बाहु, पेट और पांव ये चार अवयव हैं, इनमें उत्तम सहकार्य होना चाहिए प्रत्येक अवयव अपनी शक्तिसे जो होसकता है वह सहकार्य संपूर्ण पुरुषका हित करनेके कार्यमें करे। राष्ट्रमें ज्ञानी ज्ञान प्रचार द्वारा, शूरवीर अपनी शूरता और वीरता द्वारा, व्यापारी अपनी व्यापार शक्ति द्वारा तथा कर्मचारी अपनी कुशलता द्वारा राष्ट्रकी सेवा करे, राष्ट्रको उन्नत करे। वेद पृथ्वी परके सब मानव मिलकर एक पुरुष शरीर है ऐसा मानता है। हमने अपनी सुविधाके लिए राष्ट्रके सब मानवोंमें सहकारिता होनी चाहिए ऐसा कहा है, वह हमारी कल्पना है। वेद तो कहता है कि—

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ १ ॥
यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ॥ ११ ॥
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ १२ ॥
ऋ. १०।९०

सहस्रबाहुः पुरुषः। १।
किं बाहू किमूरू पादा उच्येते ॥ ५ ॥
बाहू राजन्योऽभवत् ।
मध्यं तदस्य यद्वैश्यः ॥ ६ ॥ अथर्व १८।६
स भूमिं सर्वतो वृत्वा। साम. ६।४।३
स भूमिं सर्वतः स्पृत्वा। वा. य. ३०।१
मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्येते ॥ १० ॥
बाहू राजन्यः कृतः। वा. य. ३१।११

'हजारों मस्तक, हजारों आंख, हजारों बाहू, हजारों पांव जिसके हैं ऐसा मानव समाजरूपी पुरुष पृथिवीके चारों ओर व्यापकर रहा है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, अर्थात् ज्ञानी, शूर, कृषक, कर्मचारी ये इसके मुख, बाहू, पेट और पांव हैं।

जिस प्रकार मानव शरीरमें सिर, बाहू, पेट और पांवमें सहकार्य रहा तो शरीर सुखी रहता है, ठीक उसी प्रकार इस मानव समाजके ज्ञानी, शूर, कृषक और कर्मचारियोंमें उत्तम सहकार्य होना चाहिये। तब सब मानव समाज उत्तम रीतिसे सुखी हो सकता है। सहकार्य होना ही समाजका सुख बढानेवाला है। एक पुरुषके शरीरमें जैसा सहकार्य रहा तो ही सुख होता है, ठीक उस प्रकार मानव समाजमें भी उत्तम सहकार्यसे उत्तम सुखकी प्राप्ति हो सकती है। एक शरीरमें शान्ति समाधान रहनेके लिये जैसा उत्तम सहकार्य लाभ दायक होता उसी तरह संपूर्ण मानव समाज में भी सहकार्यसे सुख और असहकारसे दुःख होगा।

यहां वेदने 'स भूमिं विश्वतो वृत्वा' यह मानव समाजरूपी एक पुरुष-एक शरीर– है ऐसा कहा है। आज यह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुरुष अनेक राष्ट्रों और अनेक धर्मोंमें विभक्त हुआ है, इस कारण इस मानव समाज रूपी पुरुषमें अत्यंत दुःख बढ रहा है। वेदमें कहा है कि पृथ्वी पर जितने मानव हैं उन सबका मिल कर एक शरीर जैसा उत्तम सहकार्य होना चाहिये। आज एक राष्ट्रमें भी झगडे हैं, एक राष्ट्रकी दूसरे राष्ट्रके साथ विरोधकी स्थिति है, राष्ट्र राष्ट्रमें सहकारिता नहीं है। यह असहकारिता दूर होकर पृथिवीके सब मानव जातिमें उत्तम सहकार्य कब होगा, यह हम आज नहीं कह सकते। पर वेदको वह पूर्ण सहकारिताकी स्थिति अपेक्षित है। वेदके ध्येयवादसे हम कितने दूर हैं यह यहां देखिये।

अस्तु, सम्पूर्ण मानव जातिमें शिक्षाका प्रचार हो और पृथिवी परका सब मानव समाज पूर्ण सहकार्य करनेके लिये तैयार हो यह वेदका ध्येय है।

विश्वराज्यके सामने यह ध्येय है। यह ध्येय साध्य करनेके लिये हम सबको उद्यत होना चाहिये। प्रतिदिन हमारा प्रयत्न इसी दिशासे होना चाहिये। जहां जहां असहकारिताके बीज हैं उनको दूर फेंकना और सहकारिता करना सुलभ हो जाय ऐसा यत्न करना चाहिये।

३ संसदाध्यक्ष

१ सदसस्पतिः- विश्वराज्यकी विधान सभाके अध्यक्ष।

२ क्षेत्रपतिः- विश्वराज्यकी विधान सभाके उपाध्यक्ष। लघु समितिके अध्यक्ष।

देवमाता अदितिके द्वारा मंत्रिमंडलमें भेजे गये मंत्रीगण

१ शिक्षाविभाग

१ जातवेदा अग्निः— शिक्षामंत्री, विद्यामंत्री, ज्ञानमंत्री। (१) +

२ ब्रह्मणस्पतिः— सहायक उपविद्यामंत्री।

३ बृहस्पतिः— सहायक द्वितीय उपविद्यामंत्री।

ये शिक्षा विभागके मंत्री तथा उपमंत्री हैं। इनके गुण वेदमें ये कहे हैं—

'कवि-तमः' (३।१४।१)- श्रेष्ठज्ञानी, 'जात-वेदाः' (१।४४।१) जिससे ज्ञान प्रसृत होता है, 'मेधिरः' (१।३१।२)-बुद्धिमान्, 'विचर्षणिः' (१।३१।६)- विशेष बुद्धिमान् 'विद्वान् (१।१४५।५)- ज्ञानी, 'ऋभ्यः' (४।७।६)- उत्तम ज्ञानी, 'सूरिः' (२।६।४)-बडा विद्वान्। ये पद विशेषण रूपसे अग्निके गुण वर्णनमें आये हैं। ज्ञानका प्रसार करनेवालोंमें ये गुण अवश्य चाहिये 'विद्यामंत्री' होनेके लिये ये गुण योग्य हैं इसमें संदेह नहीं है।

'ब्रह्मणस्पति और 'बृहस्पति' ये नाम ज्ञान प्रसारक मंत्रीके हैं यह स्पष्ट है। 'बृहस्पति' देवोंका गुरु और मुख्य मंत्री करके पुराणोंमें वर्णित है। इसलिए ये तीनों विद्या मंत्री तथा उपविद्या मंत्री हैं इसमें सन्देह नहीं है।

२ संरक्षण विभाग

४ इन्द्रः- प्रधान युद्ध मंत्री, अन्तर्बाह्य संरक्षण मंत्री (२) +

५ उपेन्द्रः- विष्णुः- उपयुद्धमंत्री, उपसंक्षरण मंत्री (३) +

६ रुद्रः- सेना संचालन मंत्री (४) +

७ मरुतः- सैनिक, गण विभागमें रहनेवाले सेनाके गण।

इन्द्र संरक्षण मंत्री है। यह देव आन्तरिक और बाह्य संरक्षण करता है। वेदमें इस संरक्षण मंत्रीके ये गुण कहे हैं-'अक्षितऊती' (ऋ. १।५।९) जिसके पासके संरक्षणके साधन कम नहीं होते 'अ-च्युत-च्युत्' (२।१२।९) न हिलनेवाले शत्रुओंको भी जो स्थानसे हिला देता है। 'अत्कं वसानः' (४।१८।५)- कवच धारण करता है। (१०।४७।३) 'अ-भीरुः' जो भयभीत नहीं होता, 'अ-युध्यः (१०।१०३।७)- जिसके साथ युद्ध नहीं किया जा सकता, 'अविता' (१।१२९।१०) - जो रक्षण करता है, 'इषु-हस्तः' (१०।१०३।२) - बाण हाथमें धरनेवाला, (८।६१।१०) 'गोत्र-भित्' (६।१७।२)-शत्रुके किलोंको तोडनेवाला, युध्मः (२।२१।३) -युद्ध करनेमें कुशल, 'वीर-तमः' (३।५२।८)- वीरोंमें श्रेष्ठ वीर, 'सक्रन्दनः' (१०।१०३।१)- युद्ध करनेमें कुशल, 'पृतनासु सासहि' (१।१०२।९) युद्धोंमें शत्रुका पराजय करनेवाला। ये पद इन्द्रके युद्ध विषयक वीरताके गुण बता रहे हैं। इससे स्पष्ट होता है कि इन्द्र युद्ध मंत्री या अन्तर्बाह्य संरक्षण करनेवाला मंत्री है।

५ 'विष्णु' का नाम ही 'उपेन्द्र' है। अर्थात् यह उपयुद्ध मंत्री है। और पुराणोंमें विष्णुको ही संरक्षण कर्ता कहा है। इसका वेदमें ऐसा वर्णन आता है—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शंबरस्य संहिता नव नवतिं च पुरः श्नथिष्टं ।
असुरस्य सहस्रं वीरान् अप्रति साकं हथः ॥

ऋ. ७।९९।५

'शंबर असुरके ९९ नगरियोंको विनष्ट किया और असुरके सहस्रों वीर अप्रतिम रीतिसे मारे।' इन्द्रके साथ रहकर विष्णु इस तरह अपना युद्ध कौशल्य बताता है।

६ 'रुद्र' सेना संचालन करता है। 'मरुतों' को 'रुद्र पुत्र' कहते हैं। मरुत् ये वीर सैनिक हैं। 'स्थिर-धनुः' (७।४६) – रुद्रका धनुष्य स्थिर रहता है। 'क्षिप्र-इषुः' यह बाण शीघ्र चलाता है, 'अषाळ्हः सहमानः' असह्य पराक्रम करनेवाला, 'तिग्मा-युधः' — तीक्ष्ण शस्त्रवाला यह है। उत्तम वीर है।

७ 'मरुत्' ये सैनिक हैं। 'रिशादसः' (१।२९) शत्रुका नाश करनेवाले, 'रुद्राः' शत्रुको रुलानेवाले वीर हैं। ये सैनिक हैं। एक पंक्तिमें ७।७ रहते हैं। इनकी पंक्तियां सात होती हैं। प्रत्येक पंक्तिके दोनों ओर दो पार्श्व रक्षक होते हैं। ऐसे इनका पथक शिस्त बद्ध रहता है अतः ये उत्तम सैनिक हैं।

३ आरोग्य विभाग

८ अश्विनौ– आरोग्य मंत्री (एक शस्त्रकर्ममें प्रवीण और दूसरा औषधि चिकित्सामें निपुण) (५) +

९ ओषधिः– औषधियोंका संग्रह करनेवाला,

१० सोमः– औषधियोंका राजा,

११ अन्नं– वैद्यों द्वारा सुपरीक्षित खान पान,

१२ गौः– राष्ट्रमें हर एकको गौदुग्ध, दही, घी आदि मिले ऐसी सुव्यवस्था।

अश्विनौ ये स्वास्थ्य मंत्री हैं, इन्होंने 'गाः पिन्वतं' (१।११८) गौओं को दुधारू बनाया, 'अर्वतः जिन्वतं' घोडोंको वेगवान् बनाया, 'वीरं वर्धयतं' – पुत्रोंको हृष्ट पुष्ट बनाया, 'तौग्र्यं समुद्रात् निःपारयतं' – तुग्रके पुत्रको समुद्रसे पार करके उसके घर पहुँचाया, 'च्यवानं युवानं चक्रथुः' – वृद्ध च्यवनको तरुण बनाया, 'कण्वाय चक्षुः प्रत्यधत्तं' – कण्वकी आँखें लगा दीं, 'विश्पलायै आयसीं जंघां प्रत्यधत्तं' – विश्पलाकी लोहेकी टाँग लगा दी। अश्विनौ देवोंके ये कार्य हैं। ये स्वास्थ मंत्रीके कार्य हैं। इनके साथ '९ औषधि, १० सोम, ११ अन्न, और १२ गौ ये देवताएं संबंधित हैं।

४ पोषण विभाग

१३ पूषा– पोषण मंत्री, अन्न मंत्री (६) +

१४ सूर्यः– शोधन मंत्री (७) +

१५ सविता– प्रसव करनेवाला,

१६ आदित्यः– आदान करनेवाला,

ये सब पोषण करनेवाले हैं। पूषाके वर्णनमें 'अस्य कोशः न अवपद्यते (६।५४।३)– 'इसका खजाना खाली नहीं होता सदा इसमें धन भरपूर भरा रहता है।' इसके साथ संबंध रखनेवाले १२ आदित्य हैं। यहां नमूनेके लिये 'सूर्य, सविता और आदित्य' ये तीन लिये हैं।

५ धन विभाग

१७ भगः– अर्थ मंत्री (८) +

'भगः सत्यराधः' (७।४१।३)– भग सत्य रीतिसे धनवान् है। 'तेन वयं भगवन्तः स्याम' – इसकी सुव्यवस्थासे हम प्रजाजन उत्तम धनवान् हों। यह सत्य है कि जिस राष्ट्रका अर्थ मंत्री उत्तम होगा उस राष्ट्रके लोग सुसंपन्न, धनवान् और भाग्यवान् होंगे। अर्थ मंत्री राष्ट्रमें धनका संचालन उत्तम करता है जिससे जनताका सब प्रकारसे लाभ होता रहता है।

६ उद्योग विभाग

१८ विश्वकर्मा– उद्योग मंत्री। (९) +

१९ वास्तोष्पतिः– गृह निर्माण मंत्री। (१०) +

२० त्वष्टा– शस्त्रास्त्र निर्माण मंत्री। (११) +

२१ ऋभुः– लघु उद्योग मंत्री। (१२) +

'विश्वकर्मा' पदका अर्थ सर्व उद्योग करनेवाला, विश्वको बनानेवाला है। 'वास्तोष्पति' का अर्थ है घर बनानेवाला 'वास्तु' का अर्थ 'घर' है। गृहोंको जो बनाता है वह वास्तोष्पति है। आजकी राज्य व्यवहारकी भाषामें 'गृह मंत्री' का अर्थ राष्ट्रके अन्दरकी व्यवस्था करनेवाला है। पर 'वास्तोष्पति' का अर्थ गृह निर्माण करनेवाला है। 'त्वष्टा' – यह शस्त्रास्त्र निर्माण करता है और युध्यमान वीरोंके पास उन शस्त्रास्त्रोंको पहुंचाता है। 'ऋभु' लघु उद्योग करनेवाला है। ये सब उद्योग विभागमें कार्य करनेवाले हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

७ सागर विभाग

२२ वरुणः– सागर मंत्री, नौकायुद्ध-मंत्री (१३) +

२३ चन्द्रमाः– मानस समाधान मंत्री (१४) +

२४ पर्जन्यः– कृषि साधन मंत्री (१५) +

२५ आपः– जलकी सुव्यवस्था करनेवाला।

२६ नद्यः, सरस्वती– नदीके प्रवाहको ठीक करनेवाला।

' वरुण '– सागर मन्त्री है, नौकाएं सागरमें या नदियोंमें चलाना इनका कार्य है। सागरके सम्बन्धमें उत्पन्न होनेवाले तथा नौकाओंके प्रबन्ध इनके आधीन रहते हैं। ' पर्जन्य, आप, नद्यः, सरस्वती ' ये सब जल प्रबन्ध करनेवाले देव हैं अतः इनका सम्बन्ध वरुण देवके साथ सदा रहता है।

८ जीवन विभाग

२७ वायुः– जीवन मंत्री (१६) +

९ प्रकाश विभाग

२८ विद्युत्– प्रकाश देनेका कार्य करनेवाला।

१० स्त्री विभाग

२९ उषा– बालिकाओंको आदर्श देनेवाली।

११ बाल विभाग

३० वेनः– बालकोंको आदर्श दर्शानेवाला (१७) +

१२ गुप्त संरक्षण विभाग

३१ कः– यह कौन है ? इसका पता नहीं चलता (१८) + । ' कस्मै देवाय हविषा विधेम ' (वा. य. २५।१०-१३)– किस देवके लिये हविर्द्रव्य समर्पण करें ? यह कौन देव है जो अन्दर-अन्दरसे सब कार्य करता है। वह गुप्त संरक्षक मन्त्री है।

१३ वाहन विभाग

३२ अश्वः– घोडा आदि वाहनके साधन इसमें है।

१४ मातृ-भूमि-गीत

३३ पृथिवी– मातृ-भूमिका गीत राष्ट्रीय कार्यके अन्तमें गाया जाता है।

इस तरह ये देवता वेदमें वर्णन किये हैं। इनके वर्णन देखनेसे विश्वराज्यमें इनका कार्य क्या है इसका पता लग सकता है। विश्वराज्यमें जो इनका कार्य वेद मन्त्रोंमें वर्णन किया है, उस वर्णनको देखनेसे मानवोंके राष्ट्रमें उनका कार्य क्या होगा, इसका भी पता लग सकता है। इस विचारके अनुसार यहां प्रत्येक देवताके वैदिक नामके साथ ' फलाना मन्त्री ' ऐसा दिया है वह इसका कार्य मानवोंके दर्शनके लिये राष्ट्र भी है। देवता ३३ हैं, राष्ट्रमें मुख्य मन्त्री १८ हैं। यह दर्शानेके लिए अंक पद + ऐसा चिह्न किया है, इस चिह्नवाले देवता मुख्य मन्त्रीका कर्तव्य बताते हैं, उसके साथ वाले देवता उपमन्त्री अथवा साथ कार्य करनेवाले समझना उचित है।

यहां देवताके नामसे ही देवताका उल्लेख किया है, और मन्त्री पदसे मानव राष्ट्रका कार्य बताया है। देवताके नामसे ' आधिदैवत ' का भाव समझना उचित है, मन्त्रीके अर्थसे ' आधिभौतिक भाव ' समझा जायगा और ' आध्यात्मिक भाव ' समझनेके लिए थोडा-सा अधिक विचार करना चाहिये।

वेदके तीन क्षेत्र

आध्यात्मिक, आधिभौतिक तथा आधिदैविक ऐसे तीन भाव वेद मन्त्रोंमें दिखाई देते हैं। प्रत्येक देवताके इन तीन क्षेत्रोंमें तीन भाव वेदमें दर्शाये जाते हैं। पूर्व स्थानमें देवता पदसे आदि दैवत भाव बताया है, और उस देवताके सामने जो ' मन्त्री ' करके भाव रखा है वह ' आधिभौतिक ' है। यहां आधिभौतिकका अर्थ ' मानव राष्ट्रके सम्बन्धमें ' ऐसा समझना योग्य है। ' भौतिक ' का अर्थ यहां ' मानव समाज ' ऐसा भाव है। ' आधिभौतिक ' का अर्थ मानव समाज या मानव राष्ट्रके संबंधका भाव है। ' भूत ' का अर्थ यहां प्राणी अथवा मानव है। यह भाव पूर्व स्थानमें देवताके सामने मन्त्री पद देकर बताया है अब आध्यात्मिक भाव बताना है। वेदमें जो देवताएं आयी हैं वे सबके सब देव मानव शरीरमें आकर रहती हैं। इन देवताओंको मानव शरीरमें देखना यह आध्यात्मिक भाव देखना है, इन देवताओंको मानव समाज या मानव राष्ट्रमें देखना है और विश्वमें इन देवताओंके कार्य देखना यह आधिदैविक भाव देखना है। इस तरह वेदमन्त्रोंमें कहा भाव तीन क्षेत्रोंमें देखा जाता है। यहां तक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हमने आधिदैविक (विश्वमें), आधिभौतिक (राष्ट्रमें) हमने आव देखा। अब ये देवता आध्यात्मिक क्षेत्रमें (एक मानव देहमें) किस तरह रहते हैं यह देखना है।

आध्यात्मिक क्षेत्रमें देवता

जितने देवता विश्वमें हैं उतने सब देवता मानवके देहमें हैं, मानो मानव देह छोटा विश्व ही है। इस विषयमें अथर्ववेदमें कहा है—

यस्य त्रयस्त्रिंशद्देवा अङ्गे गात्रा विभेजिरे।
तान् वै त्रयस्त्रिंशद्देवानेके ब्रह्मविदो विदुः॥

अथर्व. १०।७।२७

'जिसके अंकमें तैंतीस देव गात्र बनकर रहे हैं, उन तैंतीस देवोंको अकेले ब्रह्मज्ञानी ही जानते हैं।' अर्थात् मानव देहमें ये तैंतीस देव अंग प्रत्यंग बनकर रहे हैं। तथा और कहा है—

यस्य त्रयस्त्रिंशद्देवा अंगे सर्वे समर्पिताः।
स्कंभं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः॥

अथर्व १०।७।१३

'जिसके अंगमें सब तैंतीस देव रहे हैं, उसको सर्वाधार खंभ करके कहो, वही सबसे अधिक आनंद देनेवाला है।'

'इसलिये ज्ञानी इस पुरुषको-मानवी शरीरको-' यह ब्रह्म है ऐसा कहता है, क्योंकि सब देवताएं इसमें वैसी रहती हैं जिस तरह गौवें गोशालामें बैठती हैं।' और देखिये—

सर्वं संसिच्य मर्त्यं देवाः पुरुषमाविशन्॥

अथर्व ११।८।१३

अपनी जीवन शक्तिसे सबको सिंचन करनेवाले वे देव हैं जो सब संसारको अपनी जीवन शक्तिसे सिगा देते हैं। सब मर्त्यदेहका जीवनरससे सिंचन करके सब देव इस शरीरमें प्रविष्ट हुए हैं। तथा—

रेतः कृत्वा आज्यं देवाः पुरुषमाविशन्॥

अथर्व १०।८।२९

'रेतका घी बनाकर देवपुरुष शरीरमें आकर रहे हैं।' अर्थात् स्त्री पुरुष संबंध रूप एक यज्ञ है। इस यज्ञमें वीर्यकी आहुति दी जाती है। इस आहुतिके साथ सब देव पुरुष शरीरमें-मानव शरीरमें प्रविष्ट होकर रहे हैं। तथा—

'इन्द्रसे इन्द्र, सोमसे सोम, अग्निसे अग्नि, त्वष्टासे त्वष्टा और धातासे धाता उत्पन्न हुआ।' अथर्व ११।८।८

गृहं कृत्वा मर्त्यं देवाः पुरुषमाविशन्।

'यह मर्त्य शरीर बनाकर देव इस मानव देहमें प्रविष्ट हुए हैं।'

सूर्यश्चक्षुः वातः प्राणं पुरुषस्य विभेजिरे।

अथर्व ११।८।३१

'सूर्य चक्षु बना' वायु प्राण बना और ये देव मानवी शरीरमें आकर, विभक्त होकर, रहे हैं। और देखिये—

'जिसमें भूमि, अन्तरिक्ष और द्युलोक रहे हैं; जिसमें अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य तथा वायु अर्पित होकर रहे हैं॥१७॥ जिसका सिर वैश्वानर है और आंख अंगिरस बने हैं, अंग जिसके यातु बने हैं॥१८॥ जिसमें आदित्य, रुद्र और वसु रहे हैं, भूत वर्तमान और भविष्य जिसमें रहा है, सब लोक जिसमें रहे हैं॥२२॥ जिसके निधिका रक्षण ये तैंतीस देव कर रहे हैं, उस निधिको कौन जानता है?॥२३॥ भूमि जिसके पांव हैं, अन्तरिक्ष जिसका उदर है द्युलोक जिसका सिर है उस श्रेष्ठ ब्रह्मके लिये मेरा प्रणाम हो॥३२॥ सूर्य जिसका चक्षु हुआ है, फिर फिरसे नया बननेवाला चन्द्रमा जिसका दूसरा आंख हुआ है, अग्निको जिसने अपना मुख बनाया है उस श्रेष्ठ ब्रह्मको मेरा प्रणाम है॥३३॥ वायु जिसके प्राण और अपान हैं, आंख आंगिरस बने हैं, दिशाओंको जिसने अपने कान बनाये उस श्रेष्ठ ब्रह्मके लिये मेरा प्रणाम है॥३४॥ अथर्व. १०।७

इसमें 'ज्येष्ठ ब्रह्म' का वर्णन है। यही वर्णन जीवात्माके शरीरका है। विश्वशरीर परमात्माका है और यह शरीर जीवात्माका है। परमात्माके विश्वरूप विशाल शरीर में विशाल देवता रहते हैं और इस जीवके इस शरीरमें उन सब देवताओंके अंश आकर रहते हैं। परमात्माके विश्वशरीरमें सब ३३ देवता हैं और जीवात्माके इस छोटे शरीरमें उन सब ३३ देवताओंके अंश आकर रहे हैं। इस कारण परमात्माके विश्वशरीरका वर्णन और जीवात्माके इस छोटे शरीरका वर्णन समान रीतिसे होता है।

द्युलोक सिर है, अन्तरिक्ष लोक पेट है और भूलोक पांव है यह वर्णन दोनों स्थानों पर समान है। तैंतीस देवता जैसे परमात्माके विश्वशरीरमें हैं वैसे तैंतीस देवताओंके अंश इस मानव शरीरमें आकर रहे हैं। यही वर्णन उपनिषद्में भी ऐसा ही किया गया है देखिये—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अग्नि वाणी बन कर मुखमें प्रविष्ट हुआ, वायु प्राण बन कर नासिकामें प्रविष्ट हुआ, सूर्य आंख बन कर नेत्रमें प्रविष्ट हुआ, दिशाएं श्रवण शक्ति बन कर कानोंमें प्रविष्ट हुईं, औषधि और वनस्पतियां बाल बन कर त्वचामें प्रविष्ट हुईं, चन्द्रमा मन बन कर हृदयमें रहने लगा, मृत्यु अपान बन कर नाभीमें प्रविष्ट हुआ, आप रेत बन कर शिश्नमें प्रविष्ट हुआ। इस प्रकार सब देव अपने अपने अंशोंसे इस मानव शरीरमें आकर रहने लगे हैं। (ऐत. उ. १।२।४)

यहां आठ देवोंके अंश मानव शरीरमें किस स्थानमें आकर रहे हैं यह कहा है। इसकी तालिका ऐसी बनती है—

विश्वमें	राष्ट्रमें	व्यक्तिमें
आधिदैविक	आधिभौतिक	आध्यात्मिक
अग्नि	वक्ता, उपदेश	वाणी
वायु	प्राणी	प्राण
आदित्य	द्रष्टा	चक्षु
दिशः	श्रोता	श्रोत्र
औषधि	केशवान्	केश
चन्द्रमा	मननशक्ति	मन
मृत्यु	मरणधर्मा	अपान
आपः	वीर्यवान्	वीर्य

इस तरह आधिदैविक क्षेत्रके देवता, आध्यात्मिक क्षेत्रमें आकर रहते हैं और शरीरमें कार्य करते हैं। विश्व यह विशाल देह विराट् पुरुषका है, मानवका देह बिलकुल छोटा है, पर इस छोटेसे देहमें विश्वके संपूर्ण देवता अंश रूपसे आकर रहे हैं। यह अंश अत्यन्त छोटा है, पर यहां अंश है। सूर्य इतना बडा है, पर उसका अतिसूक्ष्म अंश इस शरीरमें नेत्रमें आकर रहा है। इस तरह अन्यान्य देवताओंके अंश इस शरीरमें आकर रहे हैं। इससे हम कह सकते हैं कि विश्वने सूक्ष्म रूप स्वीकार करके यह मानव देह बनाया है अथवा देहके अन्दरकी देवता विशाल रूप धारण करके विश्वरूपमें रहते हैं। तात्पर्य यह है कि जो विश्वमें है वही शरीरमें है और जो शरीरमें है वही विश्वमें है। आज कलके वैज्ञानिक कहते हैं कि विश्वमें जो वैज्ञानिक तत्त्व हैं वे सब मानव शरीरमें हैं यह हम स्पेक्ट्रमकी सहायतासे भी बता सकते हैं और सिद्ध करके दिखा सकते हैं कि जो विश्वमें है वह शरीरमें भी अंश रूपसे है।

'आठ चक्रोंवाली तथा नौ द्वारोंवाली यह अयोध्या नामक देवोंकी नगरी है। इस देवनगरीमें तेजसे आवृत्त एक स्वर्ग है। इस सुवर्णमय कोशमें तीन आरोंवाले तथा तीन आश्रयवाले स्थानमें जो पूजनीय आत्मवान् यक्ष है उसको ब्रह्मज्ञानी ही जानते हैं।' (अथर्व १०।२।३१,३२)

पृष्टवंशमें आठ चक्र हैं, मूलाधार स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, सूर्य, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा और सहस्रार ऐसे ये चक्र है; दो आँख, दो कान, दो नाक, एक मुख, गुदद्वार, मूत्र-द्वार ये नौ द्वार है, इसके साथ नाभि और सुषुम्ना ये दो मिलाकर ग्यारह द्वार भी कईं गिनते हैं। यह शरीर 'देवानां पूः' देवोंकी नगरी है। यह शरीर कुछ नहीं है, पूय-विण्-मूत्रका गोला नहीं है; परन्तु तैंतीस देवोंका निवास जहाँ है ऐसी यह देवनगरी है। इस देवनगरीमें हृदय स्थानमें स्वर्गधाम है, वहां 'आत्मवान् यक्ष' रहता है, यही पूजनीय आत्मा है। यह इस देवोंकी नगरीका अध्यक्ष है।

मेरा शरीर देवोंकी नगरी है और मैं आत्मा इस देवनगरीका अध्यक्ष हूँ यह भाव मनमें धारण करना चाहिये। इससे आत्मशक्ति बढती है।

देव नगरीका महात्म्य

देव या देवतामें दिव्यशक्ति रहती है, इन तैंतीस देवताओंके अंश अपने शरीरमें रहते हैं, पृष्टवंशको मेरु पर्वत कहते हैं। इस मेरु पर्वत पर ब्रह्मसभा रहती है, यही मस्तिष्क है। शिरोब्रह्म इसको कहते हैं, अँग्रेजोंके 'सेरिब्रं' इसीको कहते हैं, । 'शिरोब्रह्म' का ही 'सेरिब्रं' अप-भ्रंश हुआ है। इसी तरह पृष्टवंशमें ३३ देवता रहते हैं, इनमें ३३ चक्र हैं; पर मुख्य आठ चक्र कहे हैं। प्रत्येक चक्रमें एक-एक देवता रहते हैं और वह शरीरके एक-एक भागका कार्य करते हैं। मनके संयमसे इस चक्र स्थानीय देवताकी शक्ति बढती है। इन आठ चक्रोंमेंसे प्रत्येक चक्र पर मनः संयम करनेसे वहां शक्तिकी वृद्धि होती है और उस स्थानका बल बढता है।

इस तरह सब शरीरका आरोग्य इन चक्रों पर मनःसंयम करनेसे बढ सकता है। प्राणायामके साथ मनःसंयम इन चक्रों पर करनेसे और अधिक लाभ होता है। यह आरोग्य प्राप्त करनेका मनोनिग्रहके योगसे होनेवाला लाभ है। प्रत्येक चक्रपर मालिश करनेसे भी वहांकी दैवी शक्ति अधिक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कार्य करने लगती है। इस प्रकारकी चक्र स्थान परकी हुई मालिश और वहांका मनःसंयम ये दोनों साथ-साथ करनेसे निःसंदेह आरोग्यका लाभ होता है। अपने शरीरमें अमुक स्थान पर अमुक देवता है यह जाननेसे और उस स्थान पर मालिश तथा मनःसंयम करनेसे अपूर्व आरोग्यका लाभ हो सकता है। अपने शरीर स्थानीय नाना देवताओंका निवास स्थान जाननेसे इस तरह आरोग्य प्राप्ति होती है। तथा और भी लाभ है—

अन्तरेणतालुके य एष स्तन इव अवलंबते
सा इन्द्रयोनिः। ए. उ.

'तालुके उपर स्तन जैसा एक अवयव है, वह स्थान ऐसा है कि जहांसे इन्द्र रसका स्राव होता है।'

इस पर मनका संयम करनेसे इन्द्रसे रस अधिक स्रवता है, योगमें जिह्वा उलटी करके इस रसका ग्रहण करनेसे जीवन रस मिलता है ऐसा कहा है इस रसको प्राप्त करनेकी आयोजना योग शास्त्रमें विस्तारसे कही है। यही इन्द्र रस शरीरको जीवित रखता है और सब इंद्रियोंको अपने अपने कार्य करनेमें समर्थ बनाता है। अपने शरीरमें कहां कौनसे देवता हैं वह क्या कार्य करते हैं, वहां मनःसंयम करनेसे क्या लाभ होता है, वहां मालिश कैसी करनी चाहिये, इत्यादि बातें जाननेसे और वैसा करनेसे बडा लाभ होता है।

विश्वमें देवता हैं वे हमारे सहायक हैं, पृथिवी सबको आधार देती है, जल तृषा शान्त करता है, अग्नि हमारा अन्न पकाता है, वायु सबका जीवन कराता है, आकाश अवकाश देता है, सूर्य अपने प्रकाशसे जीवन देता है, चन्द्रमा मनका स्वास्थ्य देता है इस तरह ये देवता हमारी सहायता करते हैं इसी तरह ये देवता हमारे शरीरमें रहते हैं और हमारी सहायता शरीरके स्वास्थ्य रक्षण करनेमें करते हैं इसलिये ये सब देवता हमारे सहायक हैं।

शरीर स्थानीय देवताओंका स्थान और कर्म जाननेसे इस तरह अनेक लाभ हैं। इससे मानस संयमकी सहज सिद्ध होनेवाली चिकित्सा पद्धति अपने शरीर स्वास्थ्यके लिये अवलंबनकी जा सकती है और इसे प्रत्यक्ष लाभ भी है। शरीरके अन्दर देवता दर्शन करनेसे ये लाभ हैं।

बाह्य विश्वमें देवताओंके योगसे भी अनेक लाभ हैं। औषधियोंसे चिकित्सा होती है, जल चिकित्सा है, अग्नि चिकित्सा है, शुद्ध वायुके सेवनसे अनेक लाभ हैं, सूर्यकिरण चिकित्सा है। वेदमें भी इस विषयमें कहा है—

अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा।
अग्निं च विश्वशंभुवं आपश्च विश्वभेषजीः॥
ऋ. १।२३।२०

'सोमने मुझे कहा है कि जलमें सब प्रकारकी औषधियां हैं, अग्नि सब प्रकारके आरोग्य देता है, जलमें सब औषधियां हैं।' अर्थात् जल चिकित्सासे सब रोग दूर हो सकते हैं और अग्नि प्रयोगसे भी आरोग्य प्राप्त हो सकता है।

इस तरह विश्वमें जो देवता हैं वे मनुष्यकी अनेक प्रकारसे सहायता करते हैं, व्यक्तिके शरीरमें जो अंश रूप देवता हैं। उनसे भी आरोग्य तथा बल प्राप्ति होती है और मानव समाजमें जो देवता मानव रूपमें रहते हैं उनसे योग्य रीतिसे राज्य शासन चलाया जानेसे मानवोंका हित ही होता है। इस तरह व्यक्तिमें, समाजमें तथा विश्वमें इन देवताओंके ज्ञान तथा विज्ञानसे लाभ होता है।

वेदका यह ज्ञान इस प्रकार मानवोंका लाभ करता है अतः इसको शाश्वत मानव धर्म कहा है। देखिये—

सैनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्वमेव च।
सर्व लोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदर्हति॥
मनु. १२।१००

'वेदरूपी शास्त्र जाननेवाला सेनापतिका सेना संचालनका कार्य, राज्य चलानेका कार्य, न्यायदानसे दण्ड देनेका कार्य सब लोगोंके आधिपत्यका कार्य उत्तम रीतिसे कर सकता है।' यह मनुका कथन तब सत्य माना जा सकता हैं कि जब वेदका अर्थ राष्ट्रपरक हो सकता है यह जाना जाय।

वेदका अर्थ अध्यात्म क्षेत्रमें व्यक्ति विषयक, अधिभूत क्षेत्रमें राष्ट्र विषयक तथा अधिदैवत क्षेत्रमें विश्व विषयक होता है। यह इस विवेचनका तात्पर्य है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वाध्यायमण्डलके वैदिक प्रकाशन

वेदोंकी संहिताएं

'वेद' मानवधर्मके आदि और पवित्र ग्रंथ हैं। हरएक आय धर्मोंको अपने संग्रहमें इन पवित्र ग्रंथोंको अवश्य रखना चाहिये।

सूक्ष्म अक्षरोंमें मुद्रित	मूल्य	डा.व्य.
१ ऋग्वेद संहिता	१०)	१)
२ यजुर्वेद (वाजसनेयि) संहिता	२)	.५०
३ सामवेद संहिता	२)	.५०
४ अथर्ववेद संहिता	६)	.७५
बडे अक्षरोंमें मुद्रित		
५ यजुर्वेद (वाजसनेयि) संहिता	४)	.५०
६ सामवेद संहिता	३)	.५०
७ यजुर्वेद काण्व संहिता	५)	.७५
८ यजुर्वेद तैत्तिरीय संहिता	१०)	२)
९ यजुर्वेद मैत्रायणी संहिता	१०)	१.२५
१० यजुर्वेद काठक संहिता	१०)	१.२५

दैवत-संहिता

एक एक देवताके मंत्रोंका अध्ययन करनेसे वेदमंत्रोंके अर्थका ज्ञान ठीक तरह तथा शीघ्र हो सकता है। इसलिये ये देवता-मंत्र-संग्रह मुद्रित किये हैं।

१ दैवत संहिता— (प्रथम भाग)

अग्नि-इन्द्र-सोम-मरुद्देवताओंके मंत्रसंग्रह।

(अनेक सूचियोंके समेत एक जिल्दमें)	१२)	२)
१ अग्नि देवता मंत्रसंग्रह	६)	१)
२ इंद्र देवता मंत्रसंग्रह	७)	१)
३ सोम देवता मंत्रसंग्रह	३)	.५०
४ मरुद्देवता मंत्रसंग्रह	२)	.५)

२ दैवत संहिता— (द्वितीय भाग)

अश्विनौ-आयुर्वेद प्रकरण-रुद्र-उषा-अदिति-विश्वेदेव। इन देवताओंके मंत्रसंग्रह।

अनेक सूचियोंके साथ एक जिल्दमें)	१२)	२)
१ अश्विनौ देवता मंत्रसंग्रह	३)	.५०
२ आयुर्वेद प्रकरणम् मंत्रसंग्रह	५)	१)
३ रुद्रदेवता मंत्रसंग्रह	१.७५	.५०
४ उषा देवता मंत्रसंग्रह	१.७५	.५०
५ अदितिः आदित्याश्च मंत्रसंग्रह	३)	१)
६ विश्वेदेवाः मंत्रसंग्रह	५)	१)

३ दैवत संहिता— (तृतीय भाग)

४ उषा देवता (अर्थ तथा स्पष्टीकरणके साथ)	४)	.५०
५ अश्विनौ देवताका मंत्रसंग्रह (अर्थ तथा स्पष्टीकरणके साथ)	४)	.५०
६ मरुद्देवताका मंत्रसंग्रह (अर्थ तथा स्पष्टीकरणके साथ)	५)	.७५

ऋग्वेदका सुबोध भाष्य

(अर्थात् ऋग्वेदमें आये हुए ऋषियोंके दर्शन।)

१ से १८ ऋषियोंका दर्शन (एक जिल्दमें)	१६)	२)
(पृथक् पृथक् ऋषिदर्शन)		
१ मधुच्छन्दा ऋषिका दर्शन	१)	.२५
२ मेधातिथि „ „	२)	.२५
३ शुनःशेप „ „	१)	.२५
४ हिरण्यस्तूप „ „	१)	.२५
५ काण्व „ „	१)	.२५
६ सव्य „ „	१)	.२५
७ नोधा „ „	१)	.२५
८ पराशर „ „	१)	.२५
९ गोतम „ „	२)	.३७
१० कुत्स „ „	२)	.३७
११ त्रित „ „	१.५०	.३१
१२ संवनन „ „	.५०	.१२
१३ हिरण्यगर्भ „ „	.५०	.१२
१४ नारायण „ „	१)	.२५
१५ बृहस्पति „ „	१)	.२५
१६ वागाम्भृणी „ „	१)	.२५
१७ विश्वकर्मा „ „	१)	.२५
१८ सप्त ऋषि „ „	.५०	.१२
१९ वसिष्ठ „ „	७)	१)
२० भरद्वाज „ „	७)	१.५०

मन्त्री— 'स्वाध्याय मण्डल, पोस्ट— 'स्वाध्याय मण्डल (पारडी)' [जि. सूरत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Statement about ownership of VAIDIC DHARMA (Hindi)
(Rule 8 From IV), Newspapers (Central) Rule, 1956

1. *Place of Publication*	:	SWADHYAYA MANDAL P. O. 'Swadhyaya Mandal (Pardi) ' Pardi [Dist : Surat]
2. *Periodicity of Publication*	:	MONTHLY Ist of each Calendar Month
3. *Printer's Name*	:	VASANT SHRIPAD SATWALEKAR Swadhyaya Mandal, Bharat Mudranalaya,
Nationality	:	INDIAN
Address	:	P. O. 'Swadhyaya Mandal (Pardi) ' Pardi [Dist : Surat]
4. *Publisher's Name*	:	VASANT SHRIPAD SATWALEKAR Secretary, Swadhyaya Mandal
Nationality	:	INDIAN
Address	:	P. O. 'Swadhyaya Mandal (Pardi) ' Pardi [Dist : Surat]
5. *Editor's Name*	:	Pt. SHRIPAD DAMODAR SATWALEKAR
Nationality	:	INDIAN
Address	:	P. O. ' Swadhyaya Mandal (Pardi) ' Pardi [Dist : Surat]
6. *Name & Address of individuals who own the paper*	:	Pt. SHRIPAD DAMODAR SATWALEKAR President- Swadhyaya Mandal.

I, Vasant Shripad Satwalekar, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

28 th February, 1962

Vasant S. Satwalekar
Signature of the Publisher

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Regd. No. G. 71

वेदके व्याख्यान

वेदोंमें नाना प्रकारके विषय हैं, उनको प्रकट करनेके लिये एक एक व्याख्यान दिया जा रहा है। ऐसे व्याख्यान २०० से अधिक होंगे और इनमें वेदोंके नाना विषयोंका स्पष्ट बोध हो जायगा।

मानवी व्यवहारके दिव्य संदेश वेद दे रहा है, उनको लेनेके लिये मनुष्योंको तैयार रहना चाहिये। वेदके उपदेश आचरणमें लानेसे ही मानवोंका कल्याण होना संभव है। इसलिये ये व्याख्यान हैं। इस समय तक ये व्याख्यान प्रकट हुए हैं।

१ मधुच्छन्दा ऋषिका अग्निमें आदर्श पुरुषका दर्शन।
२ वैदिक अर्थव्यवस्था और स्वामित्वका सिद्धान्त।
३ अपना स्वराज्य।
४ श्रेष्ठतम कर्म करनेकी शक्ति और सौ वर्षोंकी पूर्ण दीर्घायु।
५ व्यक्तिवाद और समाजवाद।
६ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।
७ वैयक्तिक जीवन और राष्ट्रीय उन्नति।
८ सप्त व्याहृतियाँ।
९ वैदिक राष्ट्रगीत।
१० वैदिक राष्ट्रशासन।
११ वेदोंका अध्ययन और अध्यापन।
१२ वेदका श्रीमद्भागवतमें दर्शन।
१३ प्रजापति संस्थाद्वारा राज्यशासन।
१४ त्रैत, द्वैत, अद्वैत और एकत्वके सिद्धान्त।
१५ क्या यह संपूर्ण विश्व मिथ्या है ?
१६ ऋषियोंने वेदोंका संरक्षण किस तरह किया?
१७ वेदके संरक्षण और प्रचारके लिये आपने क्या किया है ?
१८ देवत्व प्राप्त करनेका अनुष्ठान।
१९ जनताका हित करनेका कर्तव्य।
२० मानवके दिव्य देहकी सार्थकता।
२१ ऋषियोंके तपसे राष्ट्रका निर्माण।
२२ मानवके अन्दरकी श्रेष्ठ शक्ति।
२३ वेदमें दर्शाये विविध प्रकारके राज्यशासन।
२४ ऋषियोंके राज्यशासनका आदर्श।
२५ वैदिक समयकी राज्यशासन व्यवस्था।
२६ रक्षकोंके राक्षस।
२७ अपना मन शिवसंकल्प करनेवाला हो।
२८ मनका प्रचण्ड वेग।
२९ वेदकी दैवत संहिता और वैदिक सुभाषितोंका विषयवार संग्रह।
३० वैदिक समयकी सेनाव्यवस्था।
३१ वैदिक समयके सैन्यकी शिक्षा और रचना।
३२ वैदिक देवताओंकी व्यवस्था।
३३ वेदमें नगरोंकी और वनोंकी संरक्षण व्यवस्था।
३४ अपने शरीरमें देवताओंका निवास।
३५, ३६, ३७ वैदिक राज्यशासनमें आरोग्य-मन्त्रीके कार्य और व्यवहार।
३८ वेदोंके ऋषियोंके नाम और उनका महत्त्व।
३९ रुद्र देवताका परिचय।
४० रुद्र देवताका स्वरूप।
४१ उषा देवताका परिचय।
४२ आदित्योंके कार्य और उनकी लोकसेवा।
४३ विश्वदेवा देवताका परिचय।
४४ वेदमन्त्रोंका भाव समझनेमें प्राचीन ऋषियोंका दृष्टिकोन।
४५ पुरुषमें ब्रह्मदर्शन।
४६ वेदभाष्योंका तुलनात्मक अनुशीलन।
४७ वेद हमारे धर्मकी पुस्तक है।
४८ एक मन्त्रके अनेक अर्थ।

आगे व्याख्यान प्रकाशित होते जायंगे। प्रत्येक व्याख्यानका मूल्य ।≈) छः आने रहेगा। प्रत्येकका डा. व्य. ≈) दो आना रहेगा। दस व्याख्यानोंका एक पुस्तक सजिल्द लेना हो तो उस सजिल्द पुस्तकका मूल्य ५) होगा और डा. व्य. १॥) होगा।

मंत्री — स्वाध्यायमण्डल, पोस्ट- 'स्वाध्यायमण्डल (पारडी)' पारडी [जि. सूरत]

मुद्रक और प्रकाशक- व. श्री. सातवलेकर, भारत-मुद्रणालय, पोस्ट- 'स्वाध्याय-मंडल (पारडी)' पारडी [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu